□ प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी,

जैनविद्या संस्थान,

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी

प्राप्ति स्थान

1. जैनविद्या संस्थान, श्रीमहावीरजी-322 220
2. अपभ्रंश साहित्य अकादमी

   दिगम्बर जैन नसिया भट्टारकजी

   सवाई रामसिंह रोड, जयपुर 302 004

□ प्रथम बार, 1991

□ मूल्य 13.00

□ मुद्रक

मदरलैंड प्रिंटिंग प्रेस

गीता भवन, आदर्शनगर,

जयपुर।
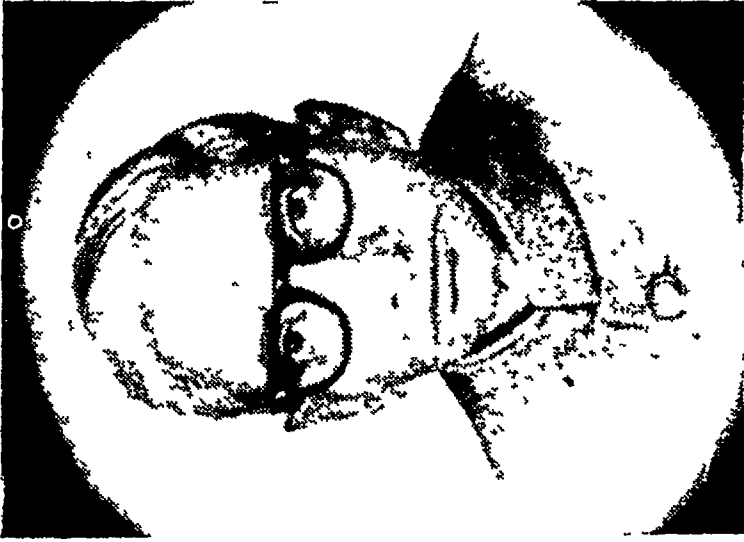
श्री गोपीचन्दजी सोगाणी
(१९०६ — १९६२)

श्रीमती मैना देवी सोगाणी
(१९१२ — १९९३)

परिवार-परिचय

स्वर्गीय श्री जमनालाल जी सोगाणी एव श्रीमती जडाव वाई सोगाणी के पुत्र **श्री गोपीचन्द जी सोगाणी** का स्वर्गवास 56 वर्ष की ग्रायु मे दिनाक 28-10-62 को हो गया था। उनकी धर्मपत्नी **श्रीमती मैना देवी सोगाणी,** (पुत्री श्री लादूरामजी ग्रजमेरा (वकील) एव श्रीमती वच्चा वाई ग्रजमेरा) का स्वर्गवास 81 वर्ष की ग्रायु मे 9-1-93 को हुग्रा।

श्री गोपीचन्दजी सोगाणी (वी ए., एल एल वी) (जन्म सन् 23 दिस 1906) के तीन भाई (श्री गुलाबचन्दजी, श्री कपूरचन्दजी एव श्री ग्रनूपचन्दजी) व दो वहिनो मे एक श्रीमती रतन वाई थी व दूसरी श्रीमती लल्ली वाई है। **श्री गोपीचन्दजी** ने कुछ समय तक वकालत की ग्रौर फिर सरकारी सेवा मे प्रवेश किया। वे इन्सपैक्टर रजिस्ट्रेशन एण्ड स्टैम्पस जयपुर के पद से सेवानिवृत्त हुए। वे सरल स्वभावी एव ईमानदार व्यक्ति थे ग्रौर सदैव ग्रपने कुटुम्बीजनो को सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते रहते थे। उन्हें मास्टर मोतीलालजी सघी (सस्थापक, श्री सन्मति पुस्तकालय, जयपुर) पर वडी श्रद्धा थी। उनकी धर्मपत्नी **श्रीमती मैना देवी सोगाणी** (जन्म 19 जुलाई 1912) के एक भाई, श्री गोपीचन्दजी ग्रजमेरा, एडवोकेट है व दो वहिनें (श्रीमती रतन वाई सेठी एव श्रीमती छोटी वाई पाण्ड्या) थी। **श्रीमती मैना देवी** सयमी, स्वाध्यायी, स्वावलम्वी व स्वाभिमानी महिला थी। वे परिश्रमी, कार्यकुशल व निर्भीक थी। उन्होने 30 वर्ष तक एक समय ही भोजन किया। ग्राहार की शुद्धता का वे वहुत ध्यान रखती थी। मरण का ग्राभास होने पर उन्होने ग्राहार-पानी का त्याग कर समतापूर्वक शरीर छोडा।

उनके तीन पुत्र एव एक पुत्री हैं —

पुत्र–1 **डॉ. कमलचन्द सोगाणी**
एम ए, वी एससी., पीएच डी.
- सेवानिवृत्त प्रोफेसर दर्शनशास्त्र सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर
- ट्रस्टी श्री सन्मति पुस्तकालय, जयपुर
- ट्रस्टी, दिगम्बर जैन ग्रतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
- सयोजक, ग्रपभ्रश साहित्य ग्रकादमी, जयपुर एव जैनविद्या सस्थान, श्रीमहावीरजी

धर्मपत्नी श्रीमती कमला देवी सोगाणी
(पुत्री स्व श्री उमरावमलजी ठोलिया, एव श्रीमती पालकीवाई ठोलिया, जयपुर निवासी)

पुत्र-2 डॉ दीपचन्द सोगाणी
एम बी बी एस
सेवानिवृत्त वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी
अमृत कौर अस्पताल, ब्यावर (राज)

धर्मपत्नी श्रीमती सुनीता सोगाणी
पुत्री स्व सुरेन्द्रनाथजी सेठी एव
स्व रतनदेवी (कोटा निवासी)

पुत्र व पुत्रवधू	पुत्र	पुत्री–दामाद
1 श्री नीतिन सोगाणी बी एस-सी डायरेक्टर-सुतानिया फाइनेन्स प्राइवेट लिमिटेड, मद्रास डायरेक्टर-पूजा साडीज, मद्रास	श्री रवि सोगाणी बी.एस-सी. स्टॉक एण्ड शेयर ब्रोकर, मद्रास स्टॉक एक्सचेंज, मद्रास	श्रीमती नीता पाटनी बी ए होलसेलर्स ऑफ बलारपुर इण्डस्ट्रीज लिमिटेड श्री विजय पाटनी बी एस-सी पुत्र श्री कुशलचन्द पाटनी एव श्रीमती कमला पाटनी (जयपुर निवासी)

श्रीमती नीलू सोगाणी
पुत्री श्री गिरधारीलालजी लुहाडिया
एव श्रीमती चन्द्रा देवी लुहाडिया
(मद्रास निवासी)

डिस्ट्रीब्यूटर्स .—
1 मोदी अलकलीज एण्ड केमीकल्स लि.
2 बलारपुर इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
3 पजाब नेशनल फर्टीलाईजर एण्ड केमीकल्स लिमिटेड

पुत्र-3 श्री पवन कुमार सोगाणी
मैकेनिकल इन्जीनियरिंग डिप्लोमा
मैन्युफैक्चरर एण्ड सप्लायर
एक्सपोर्ट रेडिमेड गारमेन्ट्स

धर्मपत्नी श्रीमती आशा सोगाणी
(पुत्री श्री महावीर बडजात्या एव
श्रीमती शान्ति बडजात्या, जोबनेर निवासी)
चीफ इन्सपैक्टर, बायलर,
जयपुर-कार्यालय मे सेवारत

पुत्र

श्री सगम सोगाणी
विद्यार्थी बी कॉम (ऑनर्स) अन्तिम वर्ष
मैन्युफैक्चरर एण्ड सप्लायर एक्सपोर्ट रेडिमेड गारमेन्ट्स

पुत्री–4 श्रीमती विमला सोनी

दामाद, श्री सुरेन्द्र कुमार सोनी एम एम-सी
एव वरिष्ठ स्टेटिस्टिशियन
(पुत्र स्व श्री कपूरचन्दजी सोनी एव
श्रीमती गैंद बाई सोनी, जयपुर निवासी)

- जनरल मेनेजर हुकुमचन्द जूट मिल्स
  हाजी नगर, कलकत्ता
- टैक्निकल कनसल्टैन्ट
  - क यूनाइटेड नेशन्स इण्डस्ट्रियल डवलपमैन्ट आर्गेनाइजेशन
  - ख एशियन डवलपमैन्ट बैंक

पुत्र	पुत्री व दामाद
श्री अमित सोनी विद्यार्थी बी कॉम. (ऑनर्स) अन्तिम वर्ष	श्रीमती वीनू गोधा बी ए श्री प्रवीण चन्द गोधा (पुत्र, श्री पदमचन्दजी गोधा एव श्रीमती कमलादेवी गोधा, अजमेर निवासी) फैलो चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट
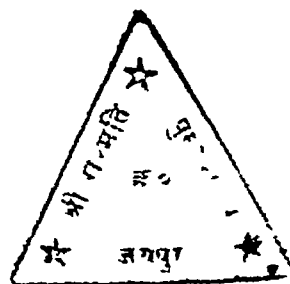
स्व. डॉ. ए. एन. उपाध्ये

एवं

स्व डॉ हीरालाल जैन

को

सादर समर्पित

अनुक्रमणिका

प्रकाशकीय

विश्व मे दो ही प्रकार के तत्व हैं—(1) चेतन और (2) जड । चेतन तत्व है आत्मा/जीव, शेष समस्त पदार्थ/वस्तुए जड हैं। चेतन और जड दोनो स्वरूपत बिल्कुल भिन्न, पृथक्-पृथक् तत्व हैं, किन्तु चेतन जड पदार्थों से अपने आपको जोडे रखता है, बाँधे रखता है, यहा तक कि उसको अपना ही समझने लगता है। इस प्रकार 'पर' के प्रति लगाव/अपनत्व/ममत्व/मोह से दु ख उत्पन्न होता है। पर-पदार्थ को अपना समझने की भ्राति/भ्रातधारणा ही दु ख का मूल है।

जगत् का प्रत्येक प्राणी सुख चाहता है और दु ख से डरता है। इसलिए तीर्थंकर, ऋषि-मुनि, त्यागी-तपस्वी अपने अनुभवो के आधार पर प्राणियो को समझाते रहे हैं—वास्तविक सुख 'पर' से अपने को अलग पहचानने-समझने, जानने-मानने मे है, यह ही आत्मज्ञान है। इन्द्रिय-सुख शाश्वत नही है, सच्चा सुख इन्द्रियो पर विजय और आत्मध्यान मे ही मिलता है, यह सुख चिरस्थायी और कल्याणकारी है। आत्म-साधक आचार्यों ने उपभोग की अपेक्षा त्याग और कर्मकाण्ड की अपेक्षा स्वानुभव का माहात्म्य बताया है। सभी धर्मों मे समय-समय पर, अलग-अलग रूपो मे, अनेक भाषाओ मे, नई-नई शब्दावलियो मे इन्ही तथ्यो की घोषणा की गई है।

दसवी शताब्दी के कवि मुनि रामसिंह ने तत्कालीन लोकभाषा अपभ्रश मे पाहुड-दोहा की रचना की। पाहुड=उपहार, भेंट, पाहुडदोहा=दोहो का उपहार। सामान्यजन के लाभार्थ उन्होने यह 'दोहो का उपहार' दिया। पाहुडदोहा उनकी एकमात्र उपलब्ध कृति है। मुनि रामसिंह राजस्थान प्रान्त के कवि थे। डॉ हीरालाल जैन ने पाहुडदोहा की प्रस्तावना मे लिखा है—"ग्रन्थ मे 'करहा-ऊँट' की उपमा बहुत आई है तथा भाषा मे भी 'राजस्थानी-हिन्दी' के प्राचीन मुहावरे दिखाई देते हैं। इससे अनुमान होता है कि ग्रन्थकार राजपुताना के थे।" मुनि रामसिंह आध्यात्मिक रहस्यवादी धारा के प्रमुख कवियो मे से एक हैं। वे साम्प्रदायिकता, सकीर्ण विचार-धारा, बाह्याडम्बर की अपेक्षा आत्मज्ञान के प्रबल समर्थक व परमसाधक हैं। आचार्य

कुन्दकुन्द, कवि योगीन्दु जैसे आत्मसाधको के क्रम मे ही मुनि रामसिंह की इस रचना मे आत्मानुभव की महत्ता, धर्म के नाम पर फैले क्रियाकाड, अन्धविश्वासो की निस्सारता/थोथेपन/भर्त्सना के स्वर मुखरित है। प्रस्तुत रचना मे उन्होने अपने गूढ आत्मिक अनुभवो को सर्वजन-हिताय निवद्ध किया है। उन्होने कहा—आत्मशुद्धि के लिए आवश्यकता है केवल राग-द्वेष-मोह की प्रवृत्तियो को रोकने और अपने-पराये/स्व-पर/जड-चेतन की पहचान की—

अम्मिए जो परु सो जि परु परु अप्पाण ण होइ ।
हउ डज्झउ सो उव्वरइ वलिवि ण जोवइ तोइ ।।

—अहो! जो पर है वह पर है। परवस्तु आत्मा नही होती है। मैं जला दिया जाता हूँ, (वह) आत्मा शेष रहता है, तव (भी वह) मुडकर भी नही देखता।

अप्पापरहँ ण मेलयउ

—आत्मा और पर का मिलाप (कभी) नही होता।

इसलिए

जोइय भिण्णउ झाय तुहुँ देहहँ तैं अप्पाणु ।

—हे योगी! तू तेरी आत्मा को देह से भिन्न ध्यान कर।
उन्होने कहा—आत्मज्ञान से रहित क्रियाकाड कणरहित भूसा कूटने के समान है।

पाहुडदोहा के इन्ही भावो से ओतप्रोत 222 दोहो मे से विशिष्ट, सरल, सर्वोपयोगी 92 दोहो का सकलन है यह 'पाहुडदोहा चयनिका'। इनका चयन सकलन, विश्लेपण किया है डॉ कमलचन्द जी सोगाणी, सेवानिवृत्त प्रोफेसर, दर्शन-विभाग, सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर, ने। 'चयनिका' ग्रन्थ के मूलहार्द को सक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत करने की डॉ सोगाणी की विशिष्ट शैली, एक अलग पहचान है। इस चयनिका मे मूलदोहा, उसका व्याकरणिक विश्लेपण और उसी पर आधारित हिन्दी अर्थ व शब्दार्थ दिए गए है जिससे पाठक अपभ्रंश व्याकरण और रचनाकार की मौलिकता दोनो को ही समझ सके। व्याकरणिक विश्लेपण की यह पद्धति डॉ सोगाणी की मौलिक देन है।

इस 'चयनिका' के लिए हम डॉ सोगाणी के आभारी हैं। पुस्तक-प्रकाशन मे सहयोगी कार्यकर्ता भी धन्यवादार्ह है। मुद्रण के लिए मदरलैण्ड प्रिंटिंग प्रैस, जयपुर के प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित है।

महावीर जयन्ती,
चैत्र शुक्ला 13, वी. नि. स 2517
28-3-1991

ज्ञानचन्द्र खिन्दूका
सयोजक
जैनविद्या सस्थान समिति,
जयपुर

प्रस्तावना

यह इतिहास-सिद्ध बात है कि मनुष्य हजारो वर्षों से शान्ति की खोज मे प्रयत्नशील रहा है। इसी के परिणामस्वरूप वह अध्यात्म के शिखर पर पहुचने मे सफल हुआ है। जैसे आयुर्विज्ञान ने विभिन्न शारीरिक व मानसिक रोगो के कारणो की खोज करके उनको दूर करने के उपाय किए है उसी प्रकार अध्यात्म ने मानवीय अशान्ति के कारणो को खोजकर उनसे बचने के लिए मनुष्य को प्रेरित किया है। जिस ससार मे मनुष्य रहता है वहाँ विभिन्न वस्तुओ और विभिन्न मनुष्यो से उसका सम्बन्ध आवश्यक होता है। जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नही जहाँ वह वस्तुओ के उपयोग और मनुष्यो के सहयोग के बिना चल सकता हो। उसकी तृप्ति इसी उपयोग और सहयोग से होती है। यह तृप्ति मनुष्य के जीवन का स्वीकारात्मक पक्ष है। किन्तु इस तृप्ति के पूर्व जहाँ मनुष्य को आकुलता-व्याकुलता रहती है वहा उसको इसके पश्चात उसमे अस्थायित्व का भान होता रहता है। यह अस्थायित्व बार-बार तृप्ति की आकाक्षा को जन्म देता है और इसी से वस्तु और व्यक्ति के प्रति आसक्ति का आविर्भाव होता है तथा मानसिक अशान्ति उत्पन्न होती है। इस तरह सामान्य मनुष्य विभिन्न प्रकार की आसक्तियो के घेरे मे ही जीता है। मुनि रामसिंह ने पाहुडदोहा[1] मे ऐसे सूत्र दिए है जिससे व्यक्ति आसक्तियो के घेरे से बाहर निकल सके और स्थायी शान्ति की ओर अग्रसर हो सके।

मनुष्य जब अपने इर्द-गिर्द की वस्तुओ को देखता है और जब वह मनुष्यो के सम्पर्क मे आता है तो एक बात स्पष्ट रूप से उसे समझ मे

---

1 पाहुडदोहा के रचनाकार मुनि रामसिंह हैं। डॉ हीरालाल जैन के अनुसार मुनि रामसिंह राजस्थान के प्रतीत होते हैं। इनका समय 1000 ईस्वी माना गया है। पाहुडदोहा 'अपभ्रश' भाषा मे रचित है। इसमे अपभ्रश के 222 दोहे हैं। इनमे से ही हमने 92 दोहो का चयन पाहुडदोहा चयनिका के अन्तर्गत किया है। मुनि रामसिंह ने अध्यात्मप्रधान शैली मे यह ग्रन्थ लिखा है। इसी का सक्षिप्त विवेचन हमने प्रस्तावना मे किया है।

आने लगती है कि यौवन, जीवन, घन, घर और सम्पदा जल की एक बूँद की तरह अस्थिर हैं। मृत्यु के आने पर किसी को काई नही बचा सकता। देह मरणशील है। देह मे बुढापा और मृत्यु दोनो होते हैं। देह मे भिन्न-भिन्न आकृतिया होती हैं। रोग भी देह मे ही होते है (22)। इस तरह से वस्तुओ की अनित्यता और जीवन की अस्थिरता की अनुभूति के कारण वह अपने आप से प्रश्न पूछता है--क्या यहाँ कुछ नित्य है? क्या यहाँ कुछ स्थिर है, अमर है? इस प्रश्न के उत्तर की खोज मे वह आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करता है (45)।

इस ज्ञान के फलस्वरूप उसमे आत्म-तत्व के प्रति रुचि उत्पन्न होती है। पाहुडदोहा का कथन है कि आध्यात्मिक ज्ञान के बिना व्यक्ति स्थिर आत्म–तत्व को नही समझ सकता है (16)। मुनि रामसिंह ऐसे बहुत शब्दो के ज्ञान को (68), बहुत शास्त्रो के अभ्यास का निरर्थक मानते हैं जो अमरता, नित्यता के प्रति आस्था उत्पन्न न कर सके (54, 68, 69, 70)। व्याख्यान देते हुए ज्ञानी ने यदि आत्मा मे चित्त नही दिया तो वह कणो को छोडकर भूसा ही इकट्ठा कर रहा है (47, 48)। अत्यधिक बाहरी जानकारी होते हुए भी यदि व्यक्ति आत्म-बोध-रहित बना रहता है तो यह बाह्य जानकारी उसके जीवन मे उचित परिणाम उत्पन्न करने मे असमर्थ रहती है (46)। वह व्यक्ति जो अपने अन्दर स्थित शान्त और शुद्ध आत्मा को नही देखता और उसे तीर्थों और देवालयो मे खोजता है वह अज्ञानी है (52, 85, 86)। यह सच है कि बाहरी वस्तुओ की अनित्यता तो आसानी से अनुभव मे आ जाती है किन्तु देह का आत्मा से घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण देह की अनित्यता को समझना कठिन रहता है और इस कारण से मरण-भय से छुटकारा पाना कठिन हो जाता है (21)। इसलिए पाहुडदोहा का समझाना है कि आत्मा और अन्य का मिलाप कभी नही होता है, वह क्या करेगा जिसके पास अपने आपका देह से अलग करने की कला नही है (53)? पाहुडदोहा ने देह से भिन्न आत्मा मे रुचि उत्पन्न करने के लिए विभिन्न प्रकार से हमे समझाया है, जैसे--जगत की शोभा आत्मा को छोडकर जो लोग 'पर' मे टिकते हैं वे मिथ्यादृष्टि है (38)। पाहुडदोहा ने शरीर के विशेषणो को आत्मा मे नकारा है और कहा है कि आत्मा तो

ज्ञानात्मक स्वरूप है, अजर-अमर है (17 से 23)। जिसके द्वारा आत्मा निज देह से भिन्न नही जाना गया है वह अघा है, वह किस प्रकार दूसरे अधो को मार्ग दिखलायेगा (71)। बहुत अटपट कहने से क्या लाभ है ? देह आत्मा नही है, हे योगी ! देह से भिन्न ज्ञानमय आत्मा है, वह तू है (79)। जिसके हृदय मे जन्म-मरण से रहित दिव्य आत्मा निवास नही करती है, वह किस प्रकार श्रेष्ठ जीवन प्राप्त करेगा (83) ? तू चाहे शरीर का उपलेपन कर, चाहे घी, तेल आदि लगा, चाहे सुमधुर आहार उसको खिला और चाहे उसके लिए और भी नाना प्रकार की चेष्टाएँ कर किन्तु देह के लिए किया गया उपकार सब ही व्यर्थ हुआ है, जिस प्रकार दुर्जन के प्रति किया गया उपकार व्यर्थ जाता है (12)। जैसे प्राणियो के लिए झोपडा होता है वैसे ही जीव के लिए काय होती है, वहाँ ही प्राणपति आत्मा रहता है, इसलिए हे योगी ! उसमे ही मन लगा।

शान्ति-साधना की भूमिका

शान्ति की साधना के लिए आसक्तियो के घेरे से बाहर निकलना आवश्यक है। 1 इसके लिए सर्वप्रथम लक्ष्य के प्रति दृढता अनिवार्य है (62)। पाहुडदोहा इस बात पर खेद व्यक्त करता है कि लक्ष्य के प्रति यद्यपि मन को रोका जाता है, पर वह आदत के वशीभूत होने के कारण आत्मा की धारणा न करके 'पर' की ओर चला जाता है (64)। अत॰ लक्ष्य के प्रति समर्पण अति आवश्यक है जिससे मन धीरे-धीरे 'पर' की ओर जाने की अपनी कुटेव को छोड दे। 2. लक्ष्य के प्रति दृढता के साथ साधक कुसगति का त्याग करदे। सगति का व्यक्ति के विचारो, भावनाओ और चारित्र पर अत्यधिक प्रभाव पडता है। कुसगति से खोटी आसक्तिया पनपती है। व्यक्ति इनके कारण व्यसनो मे, दुराचरण मे लग जाता है और अच्छे विचारो से दूर होता चला जाता है। पाहुड-दोहा का यह विश्वास उचित प्रतीत होता है कि यदि भले लोग भी दुराचारियो की सगति करते है तो उनके गुण भी धीरे-धीरे नष्ट हो जाते है (81)। इसका कारण यह मालूम होता है कि व्यक्ति जिनके साथ रहता है उनके साथ तादात्म्य करता चलता है और इससे उनके गुण-दोष ग्रहण कर लेता है। अत व्यसनी, दुराचारी व दुष्ट लोगो की

सगति दृढतापूर्वक छोड देनी चाहिए (81)। उनकी सगति की जानी चाहिए जो 'रसो व रूपो' मे आसक्त नही है (55, 73)। ऐसे लोगो को ही मित्र की कोटि मे रखा जाना चाहिए (73)।3 कुसगति के त्याग के पश्चात ही साधक लक्ष्य की ओर बढने के लिए मानसिक तैयारी करे। साधक घर, नौकर-चाकर, शरीर व इच्छित वस्तुओ को अपनी न समझे (7)। ये सभी वस्तुए आत्मा से अन्य हैं और कर्मों से उत्पन्न हैं अतः नष्ट होनेवाली और बनावटी हैं (9, 10)। वह विचार करे कि जगत धन्धे मे उलझा हुआ है और ज्ञानरहित होकर हिंसादि कर्मों को करता है। वह आत्मा के विषय मे एक क्षण भी विचार नही करता है, यह स्थिति दुःखदायी है जिससे बचा जाना चाहिए (6)। सदुपदेशो को ग्रहण करने के लिए मन चितारहित होना चाहिए (27)। निश्चिन्तता मे ही मन की एकाग्रता हो पाती है और सदुपदेश ग्रहण करने की भूमिका बनती है। साधक विचार करे कि ज्ञानमय आत्मा को छोडकर सभी कुछ कर्म-कृत है (23-24)। अतः पर वस्तु का मनन उच्चतम लक्ष्य की प्राप्ति मे बाधक है (40)।

साधना का मार्ग

आत्मा मे रुचि और मानसिक तैयारी से ही साधक सयम-मार्ग पर चलने के लिए योग्य बनता है (62)। इन्द्रिय-सयम साधना का क्रियात्मक रूप है। पाहुडदोहा का कथन है कि इन्द्रिय-विषयो मे रमण न किया जाय (50)। इन्द्रिय-विषय-सुख दो दिन के हैं, फिर दु खो का क्रम शुरू हो जाता है। हे जीव! तू अपने कधे पर कुल्हाडी मत चला (11)। हे मनुष्य! इन्द्रिय-विषयो का सेवन करने से तो तू दु खो का ही साधक होता है, इसलिए तू निरन्तर जलता है, जैसे घी से अग्नि जलता है (66)। पाहुडदोहा का कहना है कि यदि इन्द्रियो का प्रसार रोका गया है तो यही परमार्थ है (85)। चित्त की निर्मलता साधना के लिए आवश्यक है इसके बिना बाहरी तप व्यर्थ है, (35)। अन्याय न करना और अहिंसा का पालन—इन दो सद्‌गुणो के साधक के जीवन मे प्रविष्ट होने पर साधना सामाजिक आयाम ग्रहण कर लेती है और प्रशमनीय हो जाती है (78)। साधना मे ध्यान का महत्व सर्वोपरि है। जो व्यक्ति निर्मल ध्यान मे ठहर जाता है वह दूसरे पदार्थों के साथ

क्रीडा ही करता है, उसमे आसक्त नही होता है (61)। ध्यान की शक्ति से व्यक्ति हर्ष और विषाद से परे हो जाता है (28)। ऐसा व्यक्ति ही समतावान कहलाता है। साधना की पूर्णता समतावान बनने मे है (1)।[1]

चयनिका के उपर्युक्त विषय से स्पष्ट है कि पाहुडदोहा मे आसक्ति के घरे से निकलने के लिए मार्ग प्रशस्त किया गया है। इसी विशेषता से प्रभावित होकर यह चयन पाठको के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हर्ष का अनुभव हो रहा है। दोहो के हिन्दी अनुवाद को मूलानुगामी बनाने का प्रयास किया गया है। यह दृष्टि रही है कि अनुवाद पढने से ही शब्दो की विभक्तियाँ एव उनके अर्थ समझ मे आ जावे। अनुवाद को प्रवाहमय बनाने की भी इच्छा रही है। कहा तक सफलता मिली है इसको तो पाठक ही बता सकेंगे। अनुवाद के अतिरिक्त दोहो का व्याकरणिक विश्लेषण व शब्दार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। इस विश्लेषण मे जिन सकेतो का प्रयोग किया गया है उनको सकेत-सूची मे देखकर समझा जा सकता है। यह आशा की जाती है कि इससे अपभ्रश को व्यवस्थितरूप मे सीखने मे सहायता मिलेगी तथा व्याकरण के विविध नियम सहज मे ही सीखे जा सकेंगे। यह सर्वविदित है कि किसी भी भाषा को सीखने के लिए व्याकरण का ज्ञान अत्यावश्यक है। प्रस्तुत दोहे, उनके व्याकरणिक विश्लेपण एव शब्दार्थ से व्याकरण के साथ-साथ शब्दो के प्रयोग भी सीखने मे मदद मिलेगी। शब्दो की व्याकरण और उनका अर्थपूर्ण प्रयोग दोनो ही भाषा सीखने के आधार होते है। अनुवाद एव व्याकरणिक विश्लेषण जैसा भी बन पाया है पाठको के समक्ष है। पाठको के सुझाव मेरे लिए बहुत ही काम के होगे।

आभार

पाहुडदोहा चयनिका के लिए हमने डा हीरालाल जैन द्वारा सम्पादित पाहुडदोहा का उपयोग किया है। इसके लिए मैं स्व डा. हीरालाल जैन के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। पाहुडदोहा का यह सस्करण कारजा (बरार) से सन् 1933 (विक्रम स 1990) मे प्रकाशित हुआ है।

---

1 विस्तार के लिए अष्टपाहुड चयनिका की प्रस्तावना देखें।

पाहुडदोहा चयनिका के प्रूफ सशोधनो का कार्य अपभ्रश डिप्लोमा के मेरे विद्यार्थियो, सुश्री प्रीति जैन एव सुश्री सीमा बत्रा ने, जो अकादमी मे कार्यरत हैं, सहर्ष और रुचिपूर्वक सम्पन्न किया है। अत मैं उनका आभारी हूँ। मैं सुश्री प्रीति जैन का विशेष रूप मे आभारी हूँ जिन्होने इस पुस्तक के सम्पादन–प्रकाशन मे महत्वपूर्ण सुझाव दिए।

मेरी धर्मपत्नी श्रीमती कमलादेवी सोगाणी ने प्रस्तावना लिखते समय मुझे महत्वपूर्ण विचार दिए और व्याकरणिक विश्लेषण का मूल प्रति से मिलान किया. इसके लिए मैं आभार व्यक्त करता हूँ।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने के लिए जैनविद्या सस्थान समिति एव उसके सयोजक श्री ज्ञानचन्द्र जी खिन्दूका ने जो व्यवस्था की है उसके लिए आभार प्रकट करता हूँ।

—कमलचन्द सोगाणी

परामर्शदाता
अपभ्रश साहित्य अकादमी
जयपुर।

पाहुड़दोहा चयनिका

1. गुरु दिणयरु गुरु हिमकरणु गुरु दीवउ गुरु देउ ।
अप्पापरहं परंपरहं जो दरिसावइ भेउ ॥

2. अप्पायत्तउ जं जि सुहु तेण जि करि संतोसु ।
परसुहु वढ चिंततहं हियइ ण फिट्टइ सोसु ॥

3. आभुंजंता विसयसुह जे ण वि हियइ धरंति ।
ते सासयसुहु लहु लहहिं जिणवर एम भणंति ॥

4. ण वि भुजंता विसय सुह हियडइ भाउ धरंति ।
सालिसित्थु जिम वप्पुडउ णर णरयहं णिवडंति ॥

5. आयइं अडवड वडवडइ पर रंजिज्जइ लोउ ।
मणसुद्धइं णिच्चलठियइं पाविज्जइ परलोउ ॥

6 घंघइं पडियउ सयलु जगु कम्मइं करइ अयाणु ।
मोक्खहं कारणु एक्कु खणु ण वि चिंतइ अप्पाणु ॥

1 (जिस प्रकार) (प्रकाश और अन्धकार की परम्परा के भेद को दिखानेवाला) सूर्य महान (होता है), चन्द्रमा महान (होता है), (तथा) दीपक (भी) महान (होता है), (उसी प्रकार) जो देव (समतावान व्यक्ति) (आत्मा के) स्वभाव और परभाव की परम्परा के भेद को समझाता है, वह (भी) महान (होता है)।

2 जो भी सुख स्वय के अधीन (रहता है), (तू) उसमे ही सन्तोष कर। हे मूर्ख! दूसरो के (अधीन) सुख का विचार करते हुए (व्यक्तियो) के हृदय मे कुम्हलान (होती है), (जो) कभी नही मिटती है।

3 जो (इन्द्रिय–) विषयो (से उत्पन्न) सुखो को सब ओर से भोगते हुए (भी) (उनको) कभी भी हृदय मे धारण नही करते हैं, वे (व्यक्ति) शीघ्र (ही) अविनाशी सुख को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार जिनवर (समतावान व्यक्ति) कहते हैं।

4 (जो) (व्यक्ति) (इन्द्रिय–) विषयो के सुखो को न भोगते हुए भी (उनके प्रति) आसक्ति को हृदय मे रखते हैं, (वे) मनुष्य नरको मे गिरते हैं, जैसे बेचारा सालिसित्थ (नरक मे) (पडा था)।

5 (जो) (व्यक्ति) आपत्ति मे अटपट बडबडाता है, (उससे) (तो) लोक (ही) खुश किया जाता है (और कोई लाभ नही होता है), किन्तु (आपत्ति मे) मन के कषायरहित होने पर (और) अचलायमान और दृढ होने पर (यहाँ) पूज्यतम जीवन प्राप्त किया जाता है।

6 धधे मे पडा हुआ सकल जगत ज्ञानरहित (होकर) (हिंसा आदि के) कर्मों को करता है, (किन्तु) मोक्ष (शान्ति) के कारण आत्मा को एक क्षण भी नही विचारता है।

7. अण्णु म जाणहि अप्पणउ घरु परियणु तणु इट्ठु ।
कम्मायत्तउ कारिमउ आगमि जोईहिं सिट्ठु ।।

8. जं दुक्खु वि तं सुक्खु किउ जं सुहु त पि य दुक्खु ।
पइं जिय मोहहिं वसि गयइ तेण ण पायउ मुक्खु ।।

9. मोक्खु ण पावहि जीव तुहु धणु परियणु चिंततु ।
तो इ विचिंतहि तउ जि तउ पावहि सुक्खु महंतु ।।

10. मुढा सयलु वि कारिमउ मं फुडु तुहुं तुस कंडि ।
सिवपइ णिम्मलि करहि रइ घरु परियणु लहु छडि ।।

11. विसयसुहा दुइ दिवहडा पुणु दुक्खह परिवाडि ।
भुल्लउ जीव म वाहि तुहुं अप्पाखंधि कुहाडि ।।

12. उव्वलि चोप्पडि चिट्ठ करि देहि सुमिट्ठाहार ।
सयल वि देह णिरत्थ गय जिह दुज्जणउवयार ।।

13. अथिरेण थिरा मइलेण णिम्मला णिग्गुणेण गुणसारा ।
काएण जा विढप्पइ सा किरिया किण्ण कायव्वा ।।

7 घर, नौकर-चाकर, शरीर (तथा) इच्छित वस्तु को अपनी मत जानो, (चूँकि) (वे) (सब) (आत्मा से) अन्य (हैं)। (वे) (सब) कर्मों के अधीन बनावटी (स्थिति) (है)। (ऐसा) योगियों द्वारा आगम मे बताया गया है।

8 हे जीव! (तू) आसक्ति के कारण परतन्त्रता मे डूबा है। (इस कारण से) जो दुःख (है) वह (तेरे द्वारा) सुख ही माना गया (है) और जो (वास्तविक) सुख (है), वह (तेरे द्वारा) दुःख ही (समझा गया है)। इसलिए तेरे द्वारा परम शान्ति प्राप्त नही की गई (है)।

9 हे जीव! तू धन और नौकर-चाकर को मन मे रखते हुए शान्ति नही पायेगा। आश्चर्य! तो भी (तू) उनको उनको ही मन मे लाता है (और) (उनसे) विपुल सुख (व्यर्थ मे) (ही) पकडता है।

10 हे मूढ! (यह) सब (ससारी वस्तु समूह) ही बनावटी (है)। (इसलिए) तू (इस) स्पष्ट (वस्तुरूपी) भूसे को मत कूट अर्थात् तू इसमें समय मत गवाँ। घर (और) नौकर-चाकर को शीघ्र छोडकर तू निर्मल शिवपद (परम शान्ति) मे अनुराग कर।

11 (इन्द्रिय-) विषय-सुख दो दिन के (हैं), और फिर दुःखों का क्रम (शुरु हो जाता है)। हे (आत्म-स्वभाव को) भूले हुए जीव! तू अपने कधे पर कुल्हाडी मत चला।

12 (तू) (चाहे) (शरीर का) उपलेपन कर, (चाहे) घी, तेल आदि लगा, (चाहे), सुमधुर आहार (उसको) खिला, (और) (चाहे) (उसके लिए) (और भी) (नाना प्रकार की) चेष्टाएँ कर, (किन्तु) देह के लिए (किया गया) सब कुछ ही व्यर्थ हुआ (है), जिस प्रकार दुर्जन के प्रति (किया गया) उपकार (व्यर्थ होता है)।

13 अस्थिर, मलिन और गुणरहित शरीर से जो स्थिर, निर्मल और गुणों (की प्राप्ति) के लिए श्रेष्ठ (स्व-पर उपकारक) क्रिया उदय होती है, वह क्यो नही की जानी चाहिए?

14. अप्पा बुज्झिउ णिच्चु जइ केवलणाणसहाउ ।
ता पर किज्जइ काइं वढ तणु उप्परि अणुराउ ।।

15. जसु मणि णाणु ण विप्फुरइ कम्महं हेउ करंतु ।
सो मुणि पावइ सुक्खु ण वि सयलइं सत्थ मुणंतु ।।

16. बोहिविवज्जिउ जीव तुहुं विवरिउ तच्चु मुणेहि ।
कम्मविणिम्मिय भावडा ते अप्पाण भणेहि ।।

17. ण वि तुहुं पंडिउ मुक्खु ण वि ण वि ईसरु ण वि णीसु ।
ण वि गुरु कोइ वि सीसु ण वि सव्वइं कम्मविसेसु ।।

18 ण वि तुहुं कारणु कज्जु ण वि ण वि सामिउ ण वि भिच्चु।
सूरउ कायरु जीव ण वि ण वि उत्तमु ण वि णिच्चु ।।

19. पुण्णु वि पाउ वि कालु णहु धम्मु अहम्मु ण काउ ।
एक्कु वि जीव ण होहि तुहुं मिल्लिवि चेयणभाउ ।।

20. ण वि गोरउ ण वि सामलउ ण वि तुहुं एक्कु वि वण्णु ।
ण वि तणुअंगउ थूलु ण वि एहउ जाणि सवण्णु ।।

21. देहहो पिक्खिवि जरमरणु मा भउ जीव करेहि ।
जो अजरामरु बंभु परु सो अप्पाण मुणेहि ।।

14 यदि आत्मा नित्य और केवलज्ञान स्वभाववाली समझी गई (है), तो हे मूर्ख ! (इस आत्मा से) भिन्न शरीर के ऊपर आसक्ति क्यो की जाती है ?

15 जिस (मुनि) के हृदय मे (आध्यात्मिक) ज्ञान नही फूटता है, वह मुनि सभी शास्त्रो को जानते हुए भी सुख नही पाता है (और) विभिन्न कर्मों (मानसिक तनावो) के कारणो को करता हुआ ही (जीता है) ।

16 आध्यात्मिक ज्ञान (से रहित) के बिना हे जीव ! तू (आत्म–) तत्व को असत्य मानता है । (तथा) कर्मों से रचित उन (शुभ-अशुभ) चित्तवृत्तियो को (तू) स्वयं की (चित्तवृत्ति) समझता है ।

17 (हे मनुष्य) ! न ही तू पडित (है), न ही (तू) मूर्ख (है), न ही (तू) धनी (है), न ही (तू) निर्धन (है), न ही (तू) गुरु (है) । कोई शिष्य (भी) नही (है) । (ये) सभी (बातें) कर्मों की विशेषता (हैं) ।

18 हे मनुष्य ! न ही तू कारण (है), न ही (तू) कार्य (है), न ही (तू) स्वामी (है), न ही (तू) नौकर (है), न ही (तू) शूरवीर (है), (न ही) (तू) कायर (है), न ही (तू) उच्च (है) और न ही (तू) नीच (है) ।

19 हे मनुष्य ! तू पुण्य, पाप और मृत्यु नही (है) । (तू) धर्म, अधर्म और शरीर नही (है) । (वास्तव मे) (तू) ज्ञानात्मक स्वरूप को छोडकर कुछ भी नही है ।

20 (हे मनुष्य) ! (तू) न गोरा (है), न काला (है) । इस प्रकार (तेरा) कोई भी वर्ण नही है । (तू) न ही दुर्बल अगवाला (है) और न ही स्थूल (शरीर-वाला) है । (अत) तू स्ववर्ण (स्व-स्वरूप) को समझ ।

21 हे मनुष्य ! देह का बुढापा और (उसकी) मृत्यु को देखकर भय मत कर । जो अजर-अमर परम ब्रह्म (है), वह (तेरा) स्वरूप (है) । (इस बात को) (तू) समझ ।

22 देहहि उब्भउ जरमरणु देहहि वण्ण विचित्त ।
देहहो रोया जाणि तुहुं देहहि लिंगइं मित्त ।।

23. कम्मह केरउ भावडउ जइ अप्पाण भणेहि ।
तो वि ण पावहि परमपउ पुणु संसारु भमेहि ।।

24 अप्पा मिल्लिवि णाणमउ अवरु परायउ भाउ ।
सो छंडेविणु जीव तुहुं झावहि सुद्धसहाउ ।।

25. बुज्झहु बुज्झहु जिणु भणइ को बुज्झउ हलि अण्णु ।
अप्पा देहहं णाणमउ छुडु बुज्झियउ विभिण्णु ।।

26. पंच वलद्द ण रक्खियइं णंदणवणु ण गओ सि ।
अप्पु ण जाणिउ ण वि परु वि एमइ पव्वइओ सि ।।

27. मणु जाणइ उवएसडउ जहिं सोवेइ अचिंतु ।
अचित्तहो चित्तु जो मेलवइ सो पुणु होइ णिचिंतु ।।

28 मिल्लहु मिल्लहु मोक्कलउ जहिं भावइ तहिं जाउ ।
सिद्धिमहापुरि पइसरउ मा करि हरिसु विसाउ ।।

29. अम्मिए जो परु सो जि परु परु अप्पाण ण होइ ।
हउ डज्झउ सो उव्वरइ वलिवि ण जोवइ तो इ ।।

22 हे मित्र ! तू समझ (कि) बुढापा और मृत्यु दोनो देह मे (होते हैं), भिन्न-भिन्न आकृतियाँ देह मे (ही) (होती है)। रोग (भी) देह के (ही) (होते हैं), (विभिन्न) लिंग भी देह मे ही (होते है)।

23 यदि (तू) कर्मों से सम्बन्धित भाव को आत्मा कहता है, तब (तू) परम पद प्राप्त नही करेगा और फिर ससार (मानसिक तनाव) मे भ्रमण करेगा।

24 ज्ञानमय आत्मा को छोडकर दूसरा (कोई भी) भाव (झुकाव) पर-सम्बन्धी (ही) (होता है)। हे मनुष्य ! तू उसको छोडकर (आत्मा के) शुद्ध स्वभाव का ध्यान कर।

25 यदि ज्ञानमय आत्मा देह से भिन्न समझ ली गई (है), (तो) हे (व्यक्ति)! कौन अन्य (बात) को (व्यर्थ ही) समझे ? (इसलिए) जिन कहते है (कि) तुम सब (इस बात) को समझो, समझो।

26 (तेरे द्वारा) पाँच बैल (रूपीइन्द्रियाँ) नही सँभाली गई (हैं)। (तू) नन्दन-वन (रूपीआत्मा) को नही पहुँचा है। (जब) आत्मा नही जानी गई (है) और पर भी नही जाना गया (है), (तो) ऐसे ही (बिना बात ही) (तूने) सन्यास ले लिया है।

27 जब मन चितारहित सोता है, (तब ही) उपदेश को समझता है। जो (व्यक्ति) चित्त को अचित्त से मिला देता है, वह निश्चय ही चिन्तारहित हो जाता है।

28 जहाँ पर (जो) होता है, वहाँ पर (वह) (तू) होने दे। (किन्तु) (तू) हर्ष और विषाद मत कर। (व्यक्ति) सिद्धिमहापुरी (पूर्ण तनाव-मुक्तता) मे प्रवेश करे। (आचार्य कहते हैं) कि (यदि) (तुम) (सब लोग) (हर्ष और विषाद को) छोडते हो (तो) बन्धन (तनाव)–मुक्त (हो जावोगे)।

29 अहो ! जो पर है, वह पर ही (है)। पर (वस्तु) आत्मा नही होती है। मैं जला दिया जाता हूँ, वह (आत्मा) शेष रहता है, तब (भी) (वह) मुडकर (भी) नही देखता है।

30. जरइ ण मरइ ण सभवइ जो परि को वि अणंतु ।
तिहुवणसामिउ णाणमउ सो सिवदेउ णिभंतु ।।

31. अण्णु तुहारउ णाणमउ लक्खिउ जाम ण भाउ ।
संकप्पवियप्पिउ णाणमउ दड्ढउ चित्तु वराउ ।।

32 णिच्चु णिरामउ णाणमउ परमाणंदसहाउ ।
अप्पा बुज्झिउ जेण परु तासु ण अण्णु हि भाउ ।।

33. अप्पा केवलणाणमउ हियडइ णिवसइ जासु ।
तिहुयणि अच्छइ मोक्कलउ पाउ न लग्गइ तासु ।।

34. चिंतइ जंपइ कुणइ ण वि जो मुणि बंधणहेउ ।
केवलणाणफुरंततणु सो परमप्पउ देउ ।।

35. अब्भितरचित्ति वि मइलियइं वाहिरि काइं तवेण ।
चित्ति णिरंजणु को वि धरि मुच्चहि जेम मलेण ।।

36. खंतु पियंतु वि जीव जइ पावहि सासयमोक्खु ।
रिसहु भडारउ किं चवइ सयलु वि इदियसोक्खु ।।

37. अप्पा मिल्लिवि गुणणिलउ अण्णु जि झायहि झाणु ।
वढ अण्णाणविमोसियहं कहं तहं केवलणाणु ।।

30 जो न जीर्ण होता है, न मरता है, न उत्पन्न होता (है), (जो) कोई उच्चतम (है), अनन्त (है), त्रिभुवन का स्वामी (है), ज्ञानमय (है), वह निम्सन्देह शिवदेव है।

31 जब तक तुम्हारी अनोखी ज्ञानमय स्थिति नही समझी गई (है), (तब तक ही) विचार और सशय किया हुआ बेचारा अशुभ ज्ञानमय चित्त (स्थित रहता है)।

32 जिसके द्वारा उच्चतम आत्मा नित्य, निरोग, ज्ञानमय और परमानन्द स्वभाववाली समझ ली गई (है), उसके लिए अन्य झुकाव निश्चय ही नही (रहता है)।

33 जिसके हृदय मे केवलज्ञानमय आत्मा निवास करती है, उसके पाप नही लगता है, (और) (वह) त्रिभुवन मे बन्धन-मुक्त (तनाव-मुक्त) होता है।

34 जो मुनि बधन (मानसिक तनाव) के कारण को न कभी (मन से) विचारता है, न (वचन से) कहता है और न (काय से) करता है, वह केवलज्ञान से जगमगाता हुआ शरीरवाला (बन जाता है), (इसलिए) (वही) देव (है), (वही) परमात्मा (है)।

35 भीतरी चित्त मैला किया हुआ होने पर बाहर तप से क्या (लाभ) है ? चित्त मे किसी निरजन को धारण कर जिससे कि (ताकि) मल से छुटकारा पा जाए।

36 हे जीव! यदि (तू) खाते हुए (और) पीते हुए ही नित्य शान्ति पा ले (तो) पूज्य ऋषभ ने सब ही इन्द्रिय-सुख क्यो छोडे ?

37 हे मूर्ख! (आश्चर्य है) गुणो के आश्रय आत्मा को छोडकर (तू) दूसरे विचार का ही चिन्तन करता है। (समझ) अज्ञान से जुडे हुए (व्यक्तियो) के लिए वहाँ (उस स्थिति मे) केवलज्ञान (आत्मज्ञान) कैसे होगा ?

38. अप्पा मिल्लिवि जगतिलउ जो परदव्वि रमंति ।
अण्णु कि मिच्छादिट्ठियह् मत्थइ सिगइ होंति ।।

39. अप्पा मिल्लिवि जगतिलउ मूढ म झायहि अण्णु ।
जि मरगउ परियाणियउ तहु किं कच्चहु गण्णु ।।

40. अण्णु जि जीउ म चिंति तुहु जइ वीहउ दुक्खस्स ।
तिलतुसमित्तु वि सल्लडा वेयण करइ अवस्स ।।

41. अप्पाए वि विभावियइं णासइ पाउ खणेण ।
सूरु विणासइ तिमिरहरु एक्कल्लउ णिमिसेण ।।

42 जोइय हियडइ जासु पर एकु जि णिवसइ देउ ।
जम्मणमरणविवज्जियउ तो पावइ परलोउ ।।

43. कम्मु पुराइउ जो खवइ अहिणव पेसु ण देइ ।
परमणिरंजणु जो णवइ सो परमप्पउ होइ ।।

44 पाउ वि अप्पहि परिणवइ कम्मइं ताम करेइ ।
परमणिरंजणु जाम ण वि णिम्मलु होइ मुणेइ ।।

45. लोहहि मोहिउ ताम तुहुं विसयहं सुक्ख मुणेहि ।
गुरुहु पसाएं जाम ण वि अविचल वोहि लहेहि ।।

38 जगत् की शोभा आत्मा को छोडकर जो (लोग) पर-वस्तु मे टिकते हैं, (वे ही) मिथ्यादृष्टि (असत्यदृष्टिवाले) (हैं)। (इसके) अतिरिक्त क्या मिथ्यादृष्टि के माथे पर सीग होते हैं ?

39 हे मूढ ! जगत् की शोभा आत्मा को छोडकर (तू) अन्य को मत विचार। (सच है) जिसके द्वारा मरकत (मणि) जान लिया गया है उसके लिए क्या काँच की गिनती (है) ?

40 हे जीव ! यदि तू दुख मे डरा हुआ (है), (तो) पर (वस्तु) का मनन मत कर। तिल-तुस जितना भी काँटा अवश्य वेदना उत्पन्न करता है।

41 (यदि) व्यक्ति के द्वारा (आत्मा के गुण) समझे हुए हैं (तो) (वह) पाप को क्षणभर मे नष्ट कर देता है, (जैसे) सूर्य तुरन्त अन्धकाररूपी घर को अकेला नष्ट कर देता है।

42 हे योगी ! जिसके मन मे जन्म-मरण से रहित एक ही परम देव निवास करता है, तव (ही) (वह) (व्यक्ति) परलोक (श्रेष्ठ जीवन) प्राप्त करता है।

43 जो पुराने किए हुए कर्मों को नष्ट करता है और नये (कर्मों) का प्रवेश नही होने देता और जो परम निर्दोष (व्यक्ति) को नमन करता है, वह परम आत्मा हो जाता है।

44 (व्यक्ति) तभी तक कर्मों को उत्पन्न करता है और (उससे) आत्मा मे (तभी तक) दोष उत्पन्न होता है, जव तक (वह) निर्मल होकर उच्चतम और लेप (आसक्ति) से रहित (आत्मा) को नही जानता है।

45 लोभ के कारण मूर्च्छित हुआ तू तभी तक विषयो के सुख को (अपना) मानता है, जव तक (तू) गुरु की कृपा से दृढ आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त नही करता है।

46. उप्पज्जइ जेण विबोहु ण वि बहिरण्णउ तेण णाणेण ।
तइलोयपायडेण वि असुंदरो जत्थ परिणामो ।।

47 वक्खाणडा करंतु बुहु अप्पि ण दिण्णु णु चित्तु ।
कणहिं जि रहिउ पयालु जिम पर संगहिउ बहुत्तु ।।

48. पंडियपडिय पंडिया कणु छंडिवि तुस कंडिया ।
अत्थे गंथे तुट्ठो सि परमत्थु ण जाणहि मूढो सि ।।

49. सयलु वि को वि तडप्फडइ सिद्धत्तणहु तणेण ।
सिद्धत्तणु परि पावियइ चित्तहं णिम्मलएण ।।

50 अरि मणकरह म रइ करहि इंदियविसयसुहेण ।
सुक्खु णिरंतरु जेहिं ण वि मुच्चहि ते वि खणेण ।।

51. तूसि म रूसि म कोहु करि कोहे णासइ धम्मु ।
धम्मि णट्ठि णरयगइ अह गउ माणुसजम्मु ।।

52 हत्थ अहुट्ठ देवली वालहं णा हि पवेसु ।
संतु णिरंजणु तहिं वसइ णिम्मलु होइ गवेसु ।।

53 अप्पापरहं ण मेलयउ मणु मोडिवि सहस त्ति ।
सो वढ जोइय किं करइ जासु ण एही सत्ति ।।

46 जिस (ज्ञान) के द्वारा आत्म-बोध उत्पन्न नही किया जाता है, उस तीन लोक को भी प्रकाशित करनेवाले ज्ञान से (व्यक्ति) बाहरी जानकार (तो) (हो जाता है) किन्तु वहाँ (उसका) परिणाम (इतना होने पर भी) घटिया ही (दिखाई देता है)।

47 व्याख्यान देते हुए ज्ञानी ने यदि आत्मा मे चित्त नही दिया (है) (तो) (यह बात ऐसे ही है), जैसे पूरी तरह से कणो से रहित बहुत भूसा ही (उसके द्वारा) इकट्ठा किया गया (है)।

48 हे विद्वान्! हे बुद्धिमान! हे ज्ञानी! कणो (कण-समूह) को छोडकर (तेरे द्वारा) भूसा कूटा गया (है)। (आश्चर्य) (तू) ग्रन्थ (शब्द) मे और अर्थ मे सन्तुष्ट है। (तू) मूढ है, (क्योकि) तू परमार्थ को नही जानता है।

49 सब ही कोई शरीर से सिद्धत्व (आध्यात्मिक शान्ति) के लिए छटपटाते है। किन्तु (सच तो यह है कि) चित्त के निर्मल होने से सिद्धत्व प्राप्त किया जाता है।

50 अरे मनरूपी ऊँट! इन्द्रिय-विषयो से (मिलनेवाले) सुख के कारण (तू) (उनमे) रमण मत कर। जिनके कारण निरन्तर सुख नही है, वे तुरन्त ही छोड दिए जाने चाहिए।

51 (तू) प्रसन्न रह। नाराज मत (हो)। क्रोध मत कर। क्रोध के कारण शान्ति नष्ट हो जाती है। शान्ति के नष्ट होने पर नरक गति (मिलती) है। और (इस कारण से) (व्यक्तियो का) मनुष्य जन्म (ही) व्यर्थ हुआ है।

52 हाथ के निकट देवालय स्थित (है), किन्तु अज्ञानी का (उसमे) प्रवेश नही (होता) है। उस (देवालय) मे शान्त और शुद्ध आत्मा रहती है। (तू) निर्मल होकर खोज।

53 आत्मा और पर का मिलाप (कभी) नही (होता है)। (तू) मन को शीघ्र मोडकर इस प्रकार (समझ)। हे मूर्ख! वह योगी क्या करेगा जिसके (पास) यह शक्ति नही है।

54. अन्तो णत्थि सुईए कालो थोओ वयं च दुम्मेहा ।
त णवर सिक्खियव्वं जि जरमरणक्खय कुणहि ।।

55 सव्वहि रायहि छहरसहि पचहि रूवहि चित्तु ।
जासु ण रंजिउ भुवणयलि सो जोइय करि मित्तु ।।

56. देह गलंतह सवु गलइ मइ सुइ धारण धेउ ।
तहि तेहइ वढ अवसरहि विरला सुमरहि देउ ।।

57 उम्मणि थक्का जासु मणु भग्गा भूवहि चारु ।
जिम भावइ तिम संचरउ ण वि भउ ण वि संसारु ।।

58. सुक्खअडा दुइ दिवहडइ पुणु दुक्खहं परिवाडि ।
हियडा हउं पइ सिक्खवमि चित्त करिज्जहि वाडि ।।

59 जेहा पाणह झुपडा तेहा पुत्तिए काउ ।
तित्थु जि णिवसइ पाणिवइ तहि करि जोइय भाउ ।।

60 मूलु छडि जो डाल चडि कहं तह जोयाभासि ।
चीरु ण वुणणह जाइ वढ विणु उट्टिय इ कपासि ।।

61. सव्ववियप्पहं तुट्टह चेयणभावगयाह ।
कीलइ अप्पु परेण सिहु णिम्मलझाणठियाहं ।।

62 अज्जु जिणिज्जइ करहुलउ लइ पइ देविणु लक्खु ।
जित्थु चडेविणु परममुणि सव्व गयागय मोक्खु ।।

54 शास्त्रो का अन्त नही है। समय थोडा है। और हम दुर्बुद्धि हैं। (इसलिए) केवल वह (ही) सीखा जाना चाहिए, जिससे (तू) जरा-मरण को नष्ट करे।

55 हे योगी! जिसका चित्त सभी आसक्तियो द्वारा, छ रसो द्वारा, पाच रूपो द्वारा (इस) पृथ्वीतल पर नही रगा गया है, उसको (तू) मित्र वना।

56 देह के गलती हुई होने पर, इन्द्रिय-ज्ञान, शब्द-ज्ञान, मन की स्थिरता और ध्येय सव कुछ क्षीण हो जाता है। हे मूर्ख! तव उस अवसर पर वहुत थोडे (लोग) देव का स्मरण कर पाते है।

57 जिसका मन आत्मा मे ठहरा (है), (उसका) (मन) सुन्दर (हुआ है)। और वह ससार (मानसिक तनावो/आसक्तियो) से दूर हुआ (है)। (ऐसा) (व्यक्ति) जिस प्रकार (उसको) अच्छा लगता है, वैसा व्यवहार करे, (क्योकि) (उसके) (कोई) भी आसक्ति नही है (और) (इसलिए) (उसके) भय भी नही है।

58 सुख दो दिन तक (रहते हैं), फिर दु खो की परम्परा (चल जाती है)। हे हृदय! मैं तुझको सिखाता हूँ, (कि) (तू) मार्ग पर चित्त लगा।

59 जैसे प्राणियो के लिए झोपडा (होता है), अरे! वैसे ही (जीव के लिए) काय (होती है)। वहा ही प्राणपति (आत्मा) रहता है, (इसलिए) हे योगी! उसमे ही मन लगा।

60 मूल को छोडकर जो डाल पर चढता है, वहाँ योग कहाँ (है), (तू) कह। हे मूर्ख! ओटे हुए कपास के विना, वुनने के लिए (सामग्री) निश्चय ही नही (होती है) (और) (वहाँ) (कोई भी) वस्त्र नही वुनता है।

61 सव विकल्पो के टूटे हुए होने पर, आत्मा के स्वभाव मे पहुँचा हुआ होने पर और निर्मल ध्यान मे ठहरा हुआ होने पर व्यक्ति दूसरे (पदार्थ) के साथ (केवल) क्रीडा ही करता है (उसमे आसक्त नही होता है)।

62 (आत्म-शान्तिरूपी) लक्ष्य को स्वीकार करके और (सयम को) ग्रहण करके, तेरे द्वारा (इन्द्रियरूपी) ऊँट आज ही जीते जाते हैं (जीते जा सकते हैं)। जहाँ आरूढ होकर सभी परम-मुनि ससारी गमनागमन से मुक्ति (शान्ति) (प्राप्त करते हैं)।

63 अप्पा मिल्लिवि एक्कु पर अण्णु ण वइरिउ कोइ ।
जेण विणिम्मिय कम्मडा जइ पर फेडइ सोइ ॥

64 जइ वारउं तो तहिं जि पर अप्पहं मणु ण धरेइ ।
विसयहं कारणि जीवडउ णरयहं दुक्ख सहेइ ॥

65 जीव म जाणहि अप्पणा विसया होसहिं मज्झु ।
फल किं पाकहि जेम तिम दुक्ख करेसहिं तुज्झु ॥

66 विसया सेवहि जीव तुहु दुक्खह साहिक एण ।
तेण णिरारिउ पज्जलइ हुववहु जेम घिएण ॥

67. जसु जीवंतहं मणु मुवउ पंचेंदियहं समाणु ।
सो जाणिज्जइ मोक्कलउ लद्धउ पहु णिव्वाणु ॥

68 किं किज्जइ बहु अक्खरहं जे कालि खउ जंति ।
जेम अणक्खरु संतु मुणि तव वढ मोक्खु कहंति ॥

69 छहदंसणगंथि बहुल अवरुप्परु गज्जंति ।
जं कारणु इक्कु पर विवरेरा जाणंति ॥

हे आत्मन्! एक पर (-आसवित) को छोडकर अन्य कोई भी शत्रु नही (है)। जिसके द्वारा कर्म निर्मित हुए (हैं), (उस) पर (-आसवित) को (जो) दूर हटाता है, वही यति है।

4 यदि (मै) मन को (आत्मा मे) रोकता हूँ, तो (भी) (वह) वहाँ 'पर' मे ही (जाता है), (और) (खेद है कि) (वह) (मन) आत्मा को धारण नही करता है। जीव (मनुष्य) विषयो के कारण नरको के दु खो को सहन करता है।

5 हे जीव! (तू) मत समझ (कि) इन्द्रिय-विषय मेरे (तेरे) अपने होगे। (तू) जैसे-तैसे (विषयरूपी) फलो को क्यो पकाता है? वे तेरे लिए दु खो को पैदा करेंगे।

6 हे मनुष्य! तू इन्द्रिय-विषयो का सेवन करता है। इससे तो (तू) दु खो का साधक (ही) (होता है)। इसलिए (तू) निरन्तर (जलता है) जैसे घी से अग्नि जलती है।

7 जिस (मनुष्य) का जीते हुए ही पचेन्द्रिय के साथ मन मरा हुआ (है), वह मुक्त समझा जाता है, (क्योकि) (उसके द्वारा) शान्ति (या) (उसका) मार्ग प्राप्त किया गया (है)।

68 हे मूर्ख! (उन) बहुत शब्दो (के ज्ञान) से क्या (लाभ) प्राप्त किया जा है, जो (कुछ) समय मे विस्मरण को प्राप्त होते हैं? (वास्तव मे) जिस (ज्ञान) से (तू) अक्षररहित (हो जावे) (वह) तेरे लिए मोक्ष है। सत और मुनि (ऐसा) कहते हैं।

69 (मन मे) छह दर्शनो की गाँठ के कारण बहुत (दार्शनिक) एक दूसरे के विरुद्ध गरजते हैं। (सच तो यह है कि) जो (दु ख का) कारण (है), वह (आसक्ति) एक (ही) (है), किन्तु (वे लोग) विपरीत समझते हैं।

70 सिद्धतपुराणहिं वेय वढ बुज्झंतह णउ भंति ।
आणंदेण व जाम गउ ता वढ सिद्ध कहंति ।।

71 भिण्णउ जेहिं ण जाणियउ णियदेहहं परमत्थु ।
सो अंधउ अवरह अंधयह किम दरिसावइ पंथु ।।

72 जोइय भिण्णउ झाय तुहु देहह ते अप्पाणु ।
जइ देहु वि अप्पउ मुणहि ण वि पावहि णिव्वाणु ।।

73 रायवयल्लहिं छहरसहिं पंचहिं रूवहि चित्तु ।
जासु ण रंजिउ भुवणयलि सो जोइय करि मित्तु ।।

74. तोडिवि सयल वियप्पडा अप्पहं मणु वि धरेहि ।
सोक्खु णिरंतरु तहिं लहहि लहु संसारु तरेहि ।।

75 पुण्णेण होइ विहओ विहवेण मओ मएण मइमोहो ।
मइमोहेण य णरयं तं पुण्णं अम्ह मा होउ ।।

76 णमिओ सि ताम जिणवर जाम ण मुणिओ सि देहमज्झम्मि ।
जइ मुणिउ देहमज्झम्मि ता केण णवज्जए कस्स ।।

77. ता संकप्पवियप्पा कम्मं अकुणंतु सुहासुहाजणयं ।
अप्पसरूवासिद्धी जाम ण हियए परिफुरइ ।।

) हे मूर्ख ! वेद, सिद्धान्त और पुराणों को समझते हुए (व्यक्तियो) के लिए (इसमे) (कोई) सन्देह नही (है) (कि) जब आनन्द से कोई मरा (है), तब हे मूर्ख ! (वे लोग) (उसको ही) सिद्ध (सफल) कहते है ।

1 जिसके द्वारा परमार्थ (को) निज देह से भिन्न नही जाना गया (है), वह अंधा (है) । (वह) किस प्रकार दूसरे अंधो के लिए मार्ग दिखलायेगा ?

2 हे योगी! तू तेरी आत्मा को देह से भिन्न ध्यान कर । यदि (तू) देह को ही आत्मा मानता है (तो) (तू) निर्वाण (परम शान्ति) कभी नही पायेगा ।

3 छह रसो द्वारा, पाच रूपो द्वारा (तथा) आसक्ति के कोलाहल के द्वारा जिसका चित्त (इस) पृथ्वीतल पर नही रगा गया (है), हे योगी ! (तू) उसको ही मित्र बना ।

14 सब ही विकल्पो को तोडकर (तू) आत्मा मे ही मन को धारण कर । वहाँ (ही) (तू) निरन्तर सुख पायेगा (और) शीघ्र ससार (मानसिक तनाव) को पार कर जायेगा ।

75 पुण्य से वैभव होता है । वैभव से मद (होता है) । मद से बुद्धि की मूर्च्छा (होती है) और बुद्धि की मूर्च्छा से नरक (होता है) । वह पुण्य मेरे लिए न होवे ।

76 हे जिनेन्द्र! (तुम) तब तक ही नमस्कार किए गए हो, जब तक (तुम) देह के अन्दर नही समझे गए हो । यदि (तुम) देह के अन्दर जान लिए गए (हो) तो किसके द्वारा किसको नमस्कार किया जाए ?

77 शुभ-अशुभ को उत्पन्न करनेवाला कर्म न करते हुए (भी) सकल्प-विकल्प तब तक (रहते हैं), जब तक हृदय मे आत्म-स्वरूप की सिद्धि स्फुरित नही होती है ।

78. अवघउ अक्खरु जं उप्पज्जइ ।
अणु वि किं पि अण्णाउ ण किज्जइ ।।
आयइं चित्ति लिहि मणु धारिवि ।
सोउ णिचिंतिउ पाय पसारिवि ।।

79 किं बहुए अडवड वडिण देह ण अप्पा होइ ।
देहहं भिण्णउ णाणमउ सो तुहु अप्पा जोइ ।।

80. दयाविहीणउ धम्मडा णाणिय कह वि ण जोइ ।
बहुए सलिलविरोलियइ करु चोप्पडा ण होइ ।।

81. भल्लाण वि णासति गुण जहिं सहु संगु खलेहिं ।
वइसाणरु लोहह मिलिउ पिट्टिज्जइ सुघणेहिं ।।

82 तित्थइं तित्थ भमेहि वढ धोयउ चम्मु जलेण ।
एहु मणु किम धोएसि तुहुं मइलउ पावमलेण ।।

83 जोइय हियडइ जासु ण वि इक्कु ण णिवसइ देउ ।
जम्मणमरणविवज्जियउ किम पावइ परलोउ ।।

84 जिम लोणु विलिज्जइ पाणियह तिम जइ चित्तु विलिज्ज ।
समरसि हूवइ जीवडा काइं समाहि करिज्ज ।।

85 तित्थइं तित्थ भमंतयह संताविज्जइ देहु ।
अप्पें अप्पा झाइयइ णिव्वाणं पउ देहु ।।

78 (यह उत्तम है) कि दृढ अहिंसा (तेरे मन मे) उत्पन्न होती है। (तथा) (तेरे द्वारा) थोडा कुछ भी अन्याय नही किया जाता है। (तू) (अन्याय न करना और अहिंसा का पालन करना)—इन दोनो को मन मे स्थिर करके अपने चित्त मे लिख ले और फिर पाँवो को पसार कर निश्चिन्त होकर सो।

79 वहुत अटपट कहने से क्या (लाभ है) ? देह आत्मा नही (है)। हे योगी! देह से भिन्न (जो) ज्ञानमय आत्मा है, वह तू (है)।

80 हे ज्ञानी योगी! दया से रहित धर्म किसी तरह भी नही (होता है)। (यह इतना ही सच है जितना कि) विलोडन किए हुए वहुत पानी से (भी) हाथ (कभी) चिकना नही होता है।

81 जहा (भलो की) दुष्टो के साथ सगति (हुई) (कि) भलो के गुण भी नष्ट हो जाते हैं। (क्या यह सच नही है कि) लोहे के (साथ) मिली हुई अग्नि हथौडो से पीटी जाती है ?

82 तीर्थों पर, तीर्थों पर (तू) जाता है। हे मूर्ख! (तेरे द्वारा) (वहाँ) जल से चमडा धोया हुआ (है)। (किन्तु यह वता कि) पाप-मल से मैले इस मन को तू किस प्रकार धोयेगा ?

83 हे योगी! (तू वता कि) जिसके हृदय मे जन्म-मरण से रहित एक दिव्य आत्मा निवास नही करती है, (वह) किस प्रकार श्रेष्ठ जीवन प्राप्त करेगा ?

84 जिस प्रकार नमक पानी मे विलीन हो जाता है, उसी प्रकार यदि चित्त (आत्मा मे) लीन हो जाता है, (तो) जीव समतारूपी रस मे डूब जाता है। (और) समाधि क्या (कार्य) करती है।

85 तीर्थों मे, तीर्थों मे भ्रमण करते हुए (व्यक्तियो) की देह (ही) दु खी की जाती है। (चूंकि) (निर्वाण के लिए) आत्मा के द्वारा आत्मा ध्याया गया है, (इसलिए) (तू) निर्वाण मे कदम रख।

86 मूढा जोवइ देवलइं लोयहिं जाइं कियाइं ।
देह ण पिच्छइ अप्पणिय जहिं सिउ सतु ठियाइ ।।

87 देहादेवलि सिउ वसइ तुहु देवलइं णिएहि ।
हासउ महु मणि अत्थि इहु सिद्धे भिक्ख भमेहि ।।

88 जिणवरु झायहि जीव तुहु विसयकसायह खोइ ।
दुक्खु ण देक्खहि कहिं मि वढ अजरामरु पउ होइ ।।

89 इंदियपसरु णिवारियइ मण जाणहि परमत्थु ।
अप्पा मिल्लिवि णाणमउ अवरु विडाविड सत्थु ।।

90 विसया चिंति म जीव तुहुं विसय ण भल्ला होंति ।
सेवंताहं वि महुर वढ पच्छइं दुक्खइं दिंति ।।

91 भवि भवि दंसणु मलरहिउ भवि भवि करउ समाहि ।
भवि भवि रिसि गुरु होइ महु णिहयमणुब्भववाहि ।।

92 वेपथेहिं ण गम्मइ वेमुहसूई ण सिज्जए कथा ।
विण्णि ण हुंति अयाणा इंदियसोक्खं च मोक्खं च ।।

86 लोगो के द्वारा जो देवालय बनाये गये हैं, मूढ (व्यक्ति) (उनको) (तो) देखता है। (किन्तु) (खेद है कि) (वह) अपनी देह को नही देखता है जहाँ शान्त परम आत्मा ठहरा हुआ (है)।

87 देहरूपी मन्दिर मे परम आत्मा बसती है। (किन्तु) तू (उसके लिए) मन्दिरो को देखता है। मेरे मन मे यह हँसी (आती) है (कि) सिद्ध होने पर भी (तू) भीख के लिए घूमता है।

88 विषय-कषायो को नष्ट करके हे जीव! तू जिनेन्द्र का ध्यान कर। (इस प्रकार) (तू) कही भी दु ख नही देखेगा। हे मूर्ख! (तू समझ कि) अजरामर पद (इससे ही) होता है।

89 (यदि) (विभिन्न) इन्द्रियो के प्रसार रोके गए हैं (तो) हे मन! (तू) (इसी को) परमार्थ समझ। ज्ञानमय आत्मा को छोडकर दूसरे शास्त्र अटपटे (ही) (लगते) (हैं)।

90 हे जीव! तू विषयो का चिन्तन मत कर। विषय अच्छे नही होते हैं। (विषयो का) सेवन करते हुए (व्यक्तियो) के लिए (वे) मधुर (होते हैं)। किन्तु हे मूर्ख! (वे) पीछे दु खो को देते हैं।

91 (हे भगवन!) (मेरे) मलरहित सम्यग्दर्शन (आध्यात्मिक श्रद्धा) प्रत्येक जन्म मे रहे। प्रत्येक जन्म मे (मैं) समाधि के लिए प्रयत्न करूँ। (तथा) (जिनके द्वारा) मन से उत्पन्न (आसक्तिरूपी) व्याधि नष्ट कर दी गई है, (ऐसे) ऋषि प्रत्येक जन्म मे मेरे गुरु (होवें)।

92 (तू समझ कि) दो मार्गों से गमन नही किया जाता है। दो मुखवाली सूई से पुराना वस्त्र नही सिया जाता है। (ठीक इसी प्रकार) हे अज्ञानी! इन्द्रिय-सुख और तनाव-रहितता दोनो (एक साथ) नही होते हैं।

व्याकरणिक विश्लेषण एवं शब्दार्थ

1	गुरु	(गुरु) 1/1 वि	=महान
	दिणयरु	(दिणयर) 1/1	=सूर्य
	हिमकरणु	(हिमकरण) 1/1	=चन्द्रमा
	दीवउ	(दीवअ) 1/1	=दीपक
	देउ	(देअ) 1/1	=देव
	अप्पापरह्	[(अप्प→अप्पा)[1]-(पर) 6/2]	=स्व भाव और पर भाव की
	परपरह्	(परपर) 6/2	=परपरा के
	जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
	दरिसावइ	(दरिस→दरिसाव) व प्रे 3/1 सक	=समझाता है
	भेउ	(भेअ) 2/1	=भेद को
2	अप्पायत्तउ	[(अप्प)+(आयत्तउ)] [(अप्प)-(आयत्त अ) भूकृ 1/1 अनि 'अ' स्वार्थिक]	=स्वय के अधीन
	ज	(ज) 1/1 सवि	=जो
	जि	अव्यय	=भी
	सुहु	(सुह) 1/1	=सुख
	तेण	(त) 3/1 स	=उससे
	जि	अव्यय	=ही
	करि	(कर) विधि 2/1 सक	=कर
	संतोसु	(संतोस) 2/1	=संतोष

1. समास में ह्रस्व का दीर्घ हो जाता है (हे प्रा व्या 1-4)।

	परसुहु	[(पर) वि-(सुह)2/1]	=दूसरो के (अधीन) सुख को (का)
	वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
	चिंततह	(चिंत→चिंतत) वक्र 6/2	=विचार करते हुए (व्यक्तियों के
	हियइ	(हियअ) 7/1	=हृदय मे
	ण	अव्यय	=नहीं
	फिट्टइ	(फिट्ट) व 3/1 अक	=मिटती है
	सोसु	(सोस) 1/1	=कुम्हलान
3	आभुजता	(आ-भुज→भुजत) वक्र1/2	=सब ओर से भोगते हुए
	विसयसुह	[(विसय)-(सुह)2/2]	=विषयो (से उत्पन्न) सुखो को
	जे	(ज) 1/2 सवि	=जो
	ण	अव्यय	=नहीं
	वि	अव्यय	=कभी
	हियइ	(हियअ) 7/1	=हृदय में
	धरति	(धर)व3/2 सक	=धारण करते है
	ते	(त)1/2 सवि	=वे
	सासयसुहु	[(सासय) वि-(सुह) 2/1]	=अविनाशी सुख को
	लहु	अव्यय	=शीघ्र
	लहहिं	(लह) व 3/2 सक	=प्राप्त करते हैं
	जिणवर	(जिणवर) 1/2	=जिनवर
	एम	अव्यय	=इस प्रकार
	भणति	(भण) व 3/2 सक	=कहते हैं
4.	ण	अव्यय	=न
	वि	अव्यय	=भी
	भुजता	(भुज→भुजत) वक्र 1/2	=भोगते हुए
	विसय	(विसय) 6/2	=विषयो के
	सुह	(सुह) 2/2	=सुखो को

	हियडइ	(हिय+अडअ→हियडअ) 7/1 'अडअ' स्वार्थिक	=हृदय में
	भाउ	(भाअ)2/1	=आसक्ति को
	धरंति	(धर) व 3/2 सक	=रखते हैं
	सालिसित्थु	(सालिसित्थ) 1/1	=सालिसित्थ
	जिम	अव्यय	=जैसे
	वप्पुडउ	(वप्पुडा+अउ→वप्पुडउ)1/1 वि (दे)	=बेचारा
	णर	(णर) 1/2	=मनुष्य
	णरयहं	(णरय[1])6/2	=नरकों मे
	णिवडंति	(णिवड) व 3/2 अक	=गिरते हैं
5	आयइ[2]	(आयअ)7/1	=आपत्ति मे
	अडवड	(अडवड) 1/1 वि	=अटपट
	वडवडइ	(वडवड) व 3/1 अक	=बडबडाता है
	पर	अव्यय	=किन्तु
	रंजिज्जइ	(रंज→रंजिज्ज) व कर्म3/1 सक	=खुश किया जाता है
	लोउ	(लोअ) 1/1	=लोक
	मणसुद्धइ[2]	[(मण)—(सुद्ध)7/1 वि]	=मन के कषायरहित होने पर
	णिच्चलठियइ	[(णिच्चल) वि—(ठिअ)[2]7/1 वि]	=अचलायमान और दृढ होने पर
	पाविज्जइ	(पाव) व कर्म 3/1 सक	=प्राप्त किया जाता है
	परलोउ	[(पर) वि—(लोअ) 1/1]	=पूज्यतम जीवन
6	घघइ[2]	(घघ) 7/1	=घघे में
	पडियउ	(पड→पडिय→पडियअ) भूकृ 1/1 'अ' स्वार्थिक	=पडा हुआ
	सयलु	(सयल) 1/1 वि	=सकल
	जगु	(जग) 1/1	=जगत

1 कभी कभी सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है-(हे प्रा व्या 3-134)

2 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ, 146।

	कम्मइं	(कम्म) 2/2	=कर्मों को
	करइ	(कर) व 3/1 सक	=करता है
	अयाणु	(अयाण) 1/1 वि	=ज्ञानरहित
	मोक्खह[1]	(मोक्ख) 6/1	=मोक्ष के
	कारणु	(कारण)2/1	=कारण
	एक्कु	(एक्क) 1/1 वि	=एक
	खणु	(खण) 1/1	=क्षण
	ण	अव्यय	=नहीं
	वि	अव्यय	=भी
	चिंतइ	(चिंत) व 3/1 सक	=विचारता है
	अप्पाणु	(अप्पाण) 2/1	=आत्मा को
7	अण्णु	(अण्ण) 1/1 वि	=अन्य
	म	अव्यय	=मत
	जाणहि	(जाण) विधि 2/1 सक	=जानो
	अप्पणउ	(अप्पणअ) 1/1 वि 'अ' स्वार्थिक	=अपनी
	घरु	(घर) 2/1	=घर
	परियणु	(परियण)2/1	=नौकर-चाकर
	तणु	(तण) 2/1	=शरीर
	इट्ठु	(इट्ठ) 2/1 वि	=इच्छित वस्तु को
	कम्मायत्तउ	[(कम्म)+(आयत्तउ)] [(कम्म)—(आयत्तअ) भूकृ 1/1 अनि 'अ' स्वार्थिक]	=कर्मों के अधीन
	कारिमउ	(कारिमअ)1/1 वि	=बनावटी
	आगमि	(आगम) 7/1	=आगम में
	जोईहि	(जोइ) 3/2	=योगियो द्वारा
	सिट्ठु	(सिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि	=बताया गया
8	ज	(ज) 1/1 सवि	=जो
	दुक्खु	(दुक्ख) 1/1	=दुःख

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ, 151।

	वि	अव्यय	=ही
	त	(त) 1/1 सवि	=वह
	सुक्खु	(सुक्ख) 1/1	=सुख
	किउ	(किअ) भूकृ 1/1 अनि	=माना गया
	वि	अव्यय	=ही
	य	अव्यय	=और
	पइ	(तुम्ह) 3/1 स	=तेरे द्वारा
	जिय	(जिय) 8/1	=हे जीव
	मोहहिं	(मोह) 3/2	=आसक्ति के कारण
	वसि	(वस) 7/1	=परतन्त्रता मे
	गयइ[1]	(गय) भूकृ 1/2 अनि	=डूबा है
	तेण	अव्यय	=इसलिए
	ण	अव्यय	=नहीं
	पायउ	(पायअ) भूकृ 1/1 अनि 'अ' स्वा	=प्राप्त की गई
	मुक्खु	(मुक्ख) 1/1	=परम शान्ति
9	मोक्खु	(मोक्ख) 2/1	=शान्ति
	ण	अव्यय	=नहीं
	पावहि	(पाव) व 2/1 सक	=पाता है (पायेगा)
	जीव	(जीव) 8/1	=हे जीव
	तुहं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	धणु	(धण) 2/1	=धन को
	परियणु	(परियण) 2/1	=नौकर-चाकर को
	चितंतु	(चित→चिंतन) वकृ 1/1	=मन मे रखते हुए
	तो	अव्यय	=तो
	इ	अव्यय	=भी
	विचितहि	(विचित) व 2/1 सक	=मन में लाता है
	त	(त) 2/2 स	=उनको
	उ	अव्यय	=आश्चर्य

1 सम्मान के लिए बहुवचन का प्रयोग किया गया है।

	जि	अव्यय	=हो
	त	(त) 2/2 स	=उनको
	उ	अव्यय	=पादपूरक
	पावहि	(पाव) व 2/1 सक	=पकडता है
	सुक्खु	(सुक्ख) 2/1	=सुख
	महतु	(महत) 2/1 वि	=विपुल
10	मूढा	(मूढ) 8/1	=हे मूर्ख (मूढ)
	सयलु	(सयल) 1/1 वि	=सब
	वि	अव्यय	=ही
	कारिमउ	(कारिमअ) 1/1 वि	=बनावटी
	म	अव्यय	=मत
	फुडु	(फुड) 2/1 वि	=स्पष्ट
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	तुस	(तुस) 2/1	=भूसे को
	कडि	(कड) विधि 2/1 सक	=कूट
	सिवपइ	[(सिव) - (पअ) 7/1]	=शिवपद मे
	णिम्मलि	(णिम्मल) 7/1 वि	=निर्मल
	करहि	(कर) विधि 2/1 सक	=कर
	रइ	(रइ)2/1	=अनुराग
	घरु	(घर) 2/1	=घर को
	परियणु	(परियण) 2/1	=नौकर-चाकर को
	लहु	अव्यय	=शीघ्र
	छडि	(छड) सक	=छोडकर
11	विसयसुहा	[(विसय)-(सुह) 1/2]	=विषय-सुख
	दुइ	(दुइ) 6/2 वि	=दो
	दिवहडा	(दिवह+अड) 6/2 अड स्वा	=दिन के
	पुणु	अव्यय	=और फिर
	दुक्खह	(दुक्ख) 6/2	=दुखो का
	परिवाडि	(परिवाडि) 1/1	=क्रम

	भुल्लउ	(भुल्लअ) भूकृ 8/1 अनि 'अ' स्वा	=भूले हुए
	जीव	(जीव) 8/1	=हे जीव
	म	अव्यय	=मत
	वाहि	(वह→वाह) प्रे०विधि 2/1 सक	=चला
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	अप्पाखंधि	[(अप्प[1]→अप्पा) वि-(खंध)7/1]	=अपने कंधे पर
	कुहाडि	(कुहाडि) 2/1	=कुल्हाड़ी
12	उव्वलि	(उव्वल) विधि 2/1 सक	=उपलेपन कर
	चोप्पडि	(चोप्पड) विधि 2/1 सक	=घी, तेल आदि लगा
	चिट्ठ	(चिट्ठा) 2/2	=चेष्टाए
	करि	(कर) विधि 2/1 सक	=कर
	देहि	(दा) विधि 2/1 सक	=खिला
	सुमिट्ठाहार	[(सुमिट्ठ)+(आहार)] [(सुमिट्ठ) वि-(आहार) 2/1]	=सुमधुर आहार
	सयल	(सयल) 1/1 वि	=सब कुछ
	वि	अव्यय	=ही
	देह	(देह) 4/1	=देह के लिए
	णिरत्थ	(णिरत्थ) 1/1 वि	=व्यर्थ
	गय	(गय) भूकृ 1/1 अनि	=हुआ
	जिह	अव्यय	=जिस प्रकार
	दुज्जणउवयार	[(दुज्जण)-(उवयार) 1/1]	=दुर्जन के प्रति (किया गया) उपकार।
13	अथिरेण	(अथिर) 3/1 वि	=अस्थिर
	थिरा	(थिर→(स्त्री) थिरा) 1/1वि	=स्थिर
	मइलेण	(मइल) 3/1 वि	=मलिन
	णिम्मला	(णिम्मल→(स्त्री)णिम्मला)1/1 वि	=निर्मल

1 समास मे ह्रस्व का दीर्घ हुआ है (हे प्रा व्या 1-4)।

णिग्गुणेण	(णिग्गुण) 3/1 वि	=गुणरहित
गुणसारा	[(गुण)-(सार→सारा) 1/1 वि]	=गुणो (की प्राप्ति) के लिए श्रेष्ठ
काएण	(काअ) 3/1	=शरीर से
जा	(जा) 1/1 सवि	=जो
विढप्पइ	(विढप्प) व 3/1 अक	=उदय होती है
सा	(ता) 1/1 सवि	=वह
किरिया	(किरिया) 1/1	=क्रिया
कि	अव्यय	=क्यो
ण्ण	अव्यय	=नहीं
कायव्वा	(कायव्व) विधिकृ 1/1 अनि	=की जानी चाहिए
14 अप्पा	(अप्प) 1/1	=आत्मा
वुज्झिउ	(वुज्झ→वुज्झिअ) भूकृ 1/1	=समझी गई
णिच्चु	(णिच्च) 1/1 वि	=नित्य
जइ	अव्यय	=यदि
केवलणाणसहाउ	[[(केवलणाण)-(सहाअ)1/1]वि]	=केवलज्ञान स्वभाववाली
ता	अव्यय	=तो
पर	(पर) 6/1 वि	=भिन्न
किज्जइ	(किज्जइ) व कर्म 3/1 सक अनि	=की जाती है
काइ	अव्यय	=क्यो
वढ	(वढ) 8/1	=हे मूर्ख
तणु	(तणु) 6/1	=शरीर के
उप्परि	अव्यय	=ऊपर
अणुराउ	(अणुराअ) 1/1	=आसक्ति
15. जसु	(ज) 6/1 स	=जिसके
मणि	(मण) 7/1	=हृदय मे
णाणु	(णाण) 1/1	=ज्ञान
ण	अव्यय	=नहीं
विप्फुरइ	(विप्फुर) व 3/1 अक	=फूटता है

	कम्महं	(कम्म) 6/2	=कर्मों के
	हेउ	(हेउ) 2/2	=कारणो को
	करंतु	(कर→करत) वकृ 1/1	=करता हुआ
	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	मुणि	(मुणि) 1/1	=मुनि
	पावइ	(पाव) व 3/1 सक	=पाता है
	सुक्खु	(सुक्ख)2/1	=सुख
	ण	अव्यय	=नहीं
	वि	अव्यय	=भी
	सयलइ	(सयल) 2/2 वि	=सब
	सत्थ	(सत्थ) 2/2	=शास्त्रो को
	मुणंतु	(मुण→मुणत) वकृ 1/1	=जानते हुए
16	बोहिविवज्जिउ	[(बोहि)-(विवज्ज→विवज्जिअ) भूकृ 8/1]	=आध्यात्मिक ज्ञान के बिना
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	जीव	(जीव) 8/1	=हे जीव
	विवरिउ	(विवरिअ) 2/1 वि	=असत्य
	तच्चु	(तच्च) 2/1	=तत्व को
	मुणेहि	(मुण) व 2/1 सक	=मानता है
	कम्मविणिम्मिय	[(कम्म)-(विणिम्म→विणिम्मिअ) भूकृ 2/2]	=कर्मों से रचित
	भावडा	(भाव+अड) 2/2 'अड' स्वा	=चित्तवृत्तियो को
	ते	(त) 2/2 सवि	=उन
	अप्पाण	(अप्पाण) 6/1	=स्वय की
	भणेहि	(भण) व 2/1 सक	=समझता है
17	ण	अव्यय	=न
	वि	अव्यय	=ही
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	पंडिउ	(पंडिअ) 1/1 वि	=पंडित

मक्खु	(मुक्ख) 1/1 वि	=मूर्ख
ईसरु	(ईसर) 1/1 वि	=धनी
णीसु	[(ण)+(ईसु)]	=धनी नहीं, निर्धन
	ण=अव्यय, ईसु (ईस) 1/1 वि	
गुरु	(गुरु) 1/1	=गुरु
कोइ[1]	(क) 1/1 सवि	=कोई
सीसु	(सीस) 1/1	=शिष्य
सव्वइं	(सव्व) 1/2 सवि	=सभी
कम्मविसेसु	[(कम्म)-(विसेस) 1/1]	=कर्मों की विशेषता

18. ण	अव्यय	=न
वि	अव्यय	=ही
तुहु	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
कारणु	(कारण) 1/1	=कारण
कज्जु	(कज्ज) 1/1	=कार्य
सामिउ	(सामिअ) 1/1	=स्वामी
भिच्चु	(भिच्च) 1/1	=नौकर
सूरउ	(सूर-अ) 1/1 वि 'अ' स्वार्थिक	=शूरवीर
कायरु	(कायर) 1/1 वि	=कायर
जीव	(जीव) 8/1	=हे मनुष्य
उत्तमु	(उत्तम) 1/1 वि	=उच्च
णिच्चु	(णिच्च) 1/1 वि	=नीच

19. पुण्णु	(पुण्ण) 1/1	=पुण्य
वि	अव्यय	=और
पाउ	(पाअ) 1/1	=पाप
कालु	(काल) 1/1	=मृत्यु
णहु	अव्यय	=नहीं
धम्मु	(धम्म) 1/1	=धर्म

1 अनिश्चितता के लिए 'इ' जोड दिया जाता है।

	अहम्मु	(अहम्म) 1/1	=अधर्म
	ण	अव्यय	=नहीं
	काउ	(काअ) 1/1	=शरीर
	एक्कु	(एक्क) 1/1 वि	=कुछ
	वि	अव्यय	=भी
	जीव	(जीव) 8/1	=हे मनुष्य
	होहि	(हो) व 2/1 अक	=है
	तुहु	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	मिल्लिवि	(मिल्ल+इवि) सक्र	=छोडकर
	चेयणभाउ	[(चेयण) वि-(भाअ) 2/1]	=ज्ञानात्मक स्वरूप को
20	ण	अव्यय	=न
	वि	अव्यय	=ही
	गोरउ	(गोर-अ) 1/1 वि 'अ' स्वा	=गोरा
	सामलउ	(सामल-अ) 1/1 वि 'अ' स्वा	=काला
	तुहु	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	एक्कु	(एक्क) 1/1 वि	=कोई
	वण्णु	(वण्ण) 1/1	=वर्ण
	तणुअगउ	[(तणु)-(अगअ) 1/1 वि]	=दुर्बल अगवाला
	थूलु	(थूल) 1/1 वि	=स्थूल
	एहउ	अव्यय	=इस प्रकार
	जाणि	(जाण) विधि 2/1 सक	=समझ
	सवण्णु	(स-वण्ण) 2/1	=स्ववर्ण को
21.	देहहो	(देह) 6/1	=देह का
	पिक्खिवि	(पिक्ख+इवि) सक्र	=देखकर
	जरमरणु	[(जरा→जर)-(मरण) 2/1]	=बुढापा और मृत्यु को
	मा	अव्यय	=मत
	भउ	(भअ) 2/1	=भय
	जीव	(जीव) 8/1	=हे मनुष्य
	करेहि	(कर) विधि 2/1 सक	=कर

	जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
	अजरामरु	[(अजर)+(अमर)] [(अजर) वि-(अमर) 1/1 वि]	=अजर-अमर
	बंभु	(बंभ) 1/1	=ब्रह्म
	परु	(पर) 1/1 वि	=परम
	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	अप्पाण	(अप्पाण) 1/1	=स्व-रूप
	मुणेहि	(मुण) विधि 2/1 सक	=समझ
22	देहहि[1]	(देह) 1/7	=देह मे
	उब्भउ	(उब्भअ) 1/1 वि	=दोनो
	जरमरणु	[(जरा→जर)-(मरण) 1/1]	=बुढापा और मृत्यु
	वण्ण	(वण्ण) 1/2	=आकृतियाँ
	विचित्त	(विचित्त) 1/2 वि	=भिन्न-भिन्न
	देहहो	(देह) 6/1	=देह के
	रोया	(रोय) 1/2	=रोग
	जाणि	(जाण) विधि 2/1 सक	=समझ
	तुहु	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	लिंगइ	(लिंग) 1/2	=लिंग
	मित्त	(मित्त) 8/1	=हे मित्र
23	कम्महं	(कम्म) 6/2	=कर्मो (के) से
	केरउ[2]	(केरअ) 2/1 वि	=सम्बन्धक परसर्ग
	भावडउ	(भाव+अडअ) 2/1 'अडअ' स्वा	=भाव को
	जइ	अव्यय	=यदि
	अप्पाण	(अप्पाण) 2/1	=आत्मा
	भणेहि	(भण) व 2/1 सक	=कहता है
	तो	अव्यय	=तब

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 146।

2 परसर्ग-श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 161।

	वि	अव्यय	=पादपूरक
	ण	अव्यय	=नहीं
	पावहि	(पाव) व 2/1 सक	=प्राप्त करता है (करेगा)
	परमपउ	[(परम) वि - (पअ) 2/1]	=परमपद
	पुणु	अव्यय	=और फिर
	संसारु	(ससार) 2/1	=ससार (मे)
	भमेहि	(भम) व 2/1 सक	=भ्रमण करता है (करेगा)
24	अप्पा	(अप्प) 2/1	=आत्मा को
	मिल्लिवि	(मिल्ल+इवि) सक्ृ	=छोडकर
	णाणमउ	(णाणमअ) 2/1 वि	=ज्ञानमय
	अवरु	(अवर) 1/1 वि	=दूसरा
	परायउ	(परायअ) 1/1 वि	=पर-सम्बन्धी
	भाउ	(भाअ) 1/1	=भाव
	सो	(त) 2/1 स	=उसको
	छडेविणु	(छड+एविणु) सक्ृ	=छोडकर
	जीव	(जीव) 8/1	=हे मनुष्य
	तुहु	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	झावहि[1]	(झायहि→झाय) विधि 2/1 सक	=ध्यान कर
	सुद्धसहाउ	[(सुद्ध) वि-(सहाअ) 2/1]	=शुद्ध स्वभाव का
25	वुज्झहु[2]	(वुज्झ) विधि 2/2 सक	=समझो
	जिणु	(जिण) 1/1	=जिन
	भणइ	(भण) व 3/1 सक	=कहता है (कहते हैं)
	को	(क) 1/1 सवि	=कौन
	वुज्झउ	(वुज्झ) विधि 3/1 सक	=समझे
	हलि	अव्यय	=हे

1 झायहि-पाठ ठीक है ।

2 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 212 ।

	अण्णु	(अण्ण) 2/1	=अन्य को
	अप्पा	(अप्प) 1/1	=आत्मा
	देहहु[1]	(देह) 5/1	=देह से
	णाणमउ	(णाणमअ) 1/1 वि	=ज्ञानमय
	छुडु	अव्यय	=यदि
	बुज्झियउ	(बुज्झ) भूकृ 1/1 'अ' स्वार्थिक	=समझ ली गई
	विभिण्णु	(विभिण्ण) 1/1 वि	=भिन्न
26	पच	(पच) 1/2 वि	=पाच
	बलद्द	(बलद्द) 1/2	=बैल(-रूपी इन्द्रियाँ)
	ण	अव्यय	=नहीं
	रक्खियइ	(रक्ख+य) भूकृ 1/2	=संभाली गई
	णदणवणु	(णदणवण) 2/1	=नन्दनवन(रूपी आत्मा) को
	गओ	(गअ) भूकृ 1/1 अनि	=पहुचा
	सि	(अस) व 2/1 अक	=है
	अप्पु	(अप्प) 1/1	=आत्मा
	जाणिउ	(जाण→जाणिअ) भूकृ 1/1	=जानी गई
	वि	अव्यय	=भी
	परु	(पर) 1/1 वि	=पर
	वि	अव्यय	=और
	एमइ	अव्यय	=ऐसे ही
	पव्वइओ	(पव्वइअ) भूकृ 1/1 अनि	=सन्यास ले लिया
	सि	(अस) व 2/1 अक	=है
27	मणु	(मण) 1/1	=मन
	जाणइ	(जाण) व 3/1 सक	=समझता है
	उवएसडउ	(उवएस+अडअ)2/1 'अडअ' स्वा	=उपदेश को
	जहिं	अव्यय	=जब

---

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 149।

	सोवेइ	(सोव) व 3/1 अक	=सोता है
	अचिंतु	(अचिंत) 1/1 वि	=चिंतारहित
	अचित्तहो[1]	(अचित्त) 5/1	=अचित्त से
	चित्तु	(चित्त) 2/1	=चित्त को
	जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
	मेलवइ	(मेलव) व 3/1 सक	=मिला देता है
	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	पुणु	अव्यय	=निश्चय ही
	होइ	(हो) व 3/1 अक	=हो जाता है
	णिचिंतु	(णिचिंत) 1/1 वि	=चिंतारहित
28	मिल्लहु	(मिल्ल) व 2/2 सक	=छोड़ते हो
	मोक्कलउ	(मोक्कलअ) 1/1 वि 'अ' स्वा	=बन्धन-मुक्त
	जहि	(ज) 7/1 स	=जहा पर
	भावइ	(भाव) व 3/1 अक	=होता है
	तहि	(त) 7/1 स	=वहा पर
	जाउ	(जाअ) विधि 2/1 अक	=होने दे
	सिद्धिमहापुरि	(सिद्धिमहापुर) 7/1	=सिद्धिमहापुरी मे
	पइसरउ	(पइसर) विधि 3/1 सक	=प्रवेश करे
	मा	अव्यय	=मत
	करि	(कर) विधि 2/1 सक	=कर
	हरिसु	(हरिस) 2/1	=हर्ष
	विसाउ	(विसाअ) 2/1	=विषाद
29	अम्मिए	अव्यय	=अहो
	जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
	परु	(पर) 1/1 वि	=पर
	सो	(त) 1/1 सवि	=वह

---

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 148 ।

	जि	अव्यय	=ही
	अप्पाण	(अप्पाण) 1/1	=आत्मा
	ण	अव्यय	=नहीं
	होइ	(हो) व 3/1 अक	=होती है
	हउ	(अम्ह) 1/1 स	=मैं
	डज्झउ	(डज्झ) व कर्म 1/1 सक अनि	=जला दिया जाता हूँ
	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	उव्वरइ	(उव्वर) व 3/1 अक	=शेष रहता है
	वलिवि	(वल+इवि) सकृ	=मुडकर
	ण	अव्यय	=नहीं
	जोवइ	(जोव) व 3/1 सक	=देखता है
	तो	अव्यय	=तब
	इ	अव्यय	=भी
30	जरइ	(जर) व 3/1 अक	=जीर्ण होता है
	ण	अव्यय	=नहीं
	मरइ	(मर) व 3/1 अक	=मरता है
	संभवइ	(समव) व 3/1 अक	=उत्पन्न होता है
	जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
	परि	[(पर)+(इ)] पर (पर)1/1 वि इ (अव्यय)=पादपूरक	=उच्चतम
	कोवि	(क) 1/1 सवि	=कोई
	अणतु	(अणत) 1/1 वि	=अनत
	तिहुवणसामिउ	[(तिहुवण)-(सामिअ) 1/1 'अ' स्वार्थिक]	=त्रिभुवन का स्वामी
	णाणमउ	(णाणमअ) 1/1 वि	=ज्ञानमय
	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	सिवदेउ	(सिवदेअ) 1/1	=शिवदेव
	णिभतु	(णिभत) 1/1 वि	=निस्सदेह
31	अण्णु	(अण्ण) 1/1 वि	=अनोखी

	तुहारउ	(तुहारअ) 1/1 वि	=तुम्हारी
	णाणमउ	(णाणमअ) 1/1 वि	=ज्ञानमय
	लक्खिउ	(लक्ख→लक्खिअ) भूकृ 1/1	=समझी गई
	जाम	अव्यय	=जब तक
	ण	अव्यय	=नहीं
	भाउ	(भाअ) 1/1	=स्थिति
	सकप्पवियप्पिउ	[(सकप्प)-(वियप्प→विप्पिअ) भूकृ 1/1]	=विचार और सशय किया हुआ
	दड्ढउ	(दड्ढअ) भूकृ 1/1 अनि 'अ' स्वा	=अशुभ
	चित्तु	(चित्त) 1/1	=चित्त
	वराउ	(वराअ) 1/1 वि	=बेचारा
32	णिच्चु	(णिच्च) 1/1 वि	=नित्य
	णिरामउ	(णिरामअ) 1/1 वि	=निरोग
	णाणमउ	(णाणमअ) 1/1 वि	=ज्ञानमय
	परमाणदसहाउ	[[(परमाणद)-(सहाअ) 1/1] वि]	=परमानन्द स्वभाववाली
	अप्पा	(अप्प) 1/1	=आत्मा
	बुज्झिउ	(बुज्झ→बुज्झिअ) भूकृ 1/1	=समझ ली गई
	जेण	(ज) 3/1 स	=जिसके द्वारा
	परु	(पर) 1/1 वि	=उच्चतम
	तासु	(त) 4/1 स	=उसके लिए
	ण	अव्यय	=नहीं
	अण्णु	(अण्ण) 1/1 वि	=अन्य
	हि	अव्यय	=निश्चय ही
	भाउ	(भाअ) 1/1	=झुकाव
33	अप्पा	(अप्प) 1/1	=आत्मा
	केवलणाणमउ	(केवलणाणमअ) 1/1 वि	=केवलज्ञानमय
	हियडइ	(हिय+अडअ) 7/1 'अडअ' स्वा	=हृदय मे
	णिवसइ	(णिवस) व 3/1 अक	=निवास करती है
	जासु	(ज) 6/1 स	=जिसके

	तिहुयणि	(तिहुयण) 7/1	=त्रिभुवन मे
	अच्छइ	(अच्छ) व 3/1 अक	=होता है
	मोक्कलउ	(मोक्कलअ) 1/1 वि	=बन्धन-मुक्त
	पाउ	(पाअ) 1/1	=पाप
	ण	अव्यय	=नहीं
	लग्गइ	(लग्ग) व 3/1 अक	=लगता है
	तासु	(त) 6/1 स	=उसके
34	चिंतइ	(चिंत) व 3/1 सक	=विचारता है
	जपइ	(जप) व 3/1 सक	=कहता है
	कुणइ	(कुण) व 3/1 सक	=करता है
	ण	अव्यय	=न
	वि	अव्यय	=कभी
	जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
	मुणि	(मुणि) 1/1	=मुनि
	बंधणहेउ	[(बंधण)-(हेअ) 2/1]	=बन्धन के कारण को
	केवलणाण-फुरततणु	[[(केवलणाण)-(फुरत) वकृ-(तणु) 1/1] वि]	=केवलज्ञान से जगमगाता हुआ शरीरवाला
	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	परमप्पउ	(परमप्पअ) 1/1	=परमात्मा
	देउ	(देअ) 1/1	=देव
35	अब्भिंतरचित्ति	[(अब्भिंतर) वि-(चित्त) 7/1]	=भीतरी चित्त
	वि	अव्यय	=पादपूरक
	मइलियइ	(मइल - मइलिय) भूकृ 7/1	=मैला किया हुआ होने पर
	बाहिरि	अव्यय	=बाहर
	काइ	(काइ)1/1स	=क्या
	तवेण	(तव)3/1	=तप से
	चित्ति	(चित्त) 7/1	=चित्त मे
	णिरंजणु	(णिरंजण) 2/1 वि	=निरंजन को
	कोवि	(क)2/1 सवि	=किसी

	धरि	(धर) विधि 2/1 सक	=धारण कर
	मुच्चहि	(मुच्चहि) विधि 2/1 सक अनि	=छुटकारा पा जाए
	जेम	अव्यय	=जिससे कि (ताकि)
	मलेण	(मल) 3/1	=मल से
36	खन्तु	(खा→खन्त) वकृ 1/1	=खाते हुए
	पियतु	(पिय) वकृ 1/1	=पीते हुए
	वि	अव्यय	=ही
	जीव	(जीव)8/1	=हे जीव
	जइ	अव्यय	=यदि
	पावहि	(पाव) विधि 2/1 सक	=पा ले
	सासयमोक्खु	[(सासय)-(मोक्ख)2/1]	=नित्य शान्ति
	रिसहु	(रिसह) 1/1	=ऋषभ ने
	भडारउ	(भडारअ) 1/1 वि	=पूज्य
	किं	अव्यय	=क्यों
	चवइ[1]	(चव) व 3/1 सक	=छोड़े
	सयलु	(सयल) 2/1 वि	=सब
	वि	अव्यय	=ही
	इंदियसोक्खु	[(इंदिय)-(मोक्ख) 2/1]	=इन्द्रिय-सुख
37.	अप्पा	(अप्प) 2/1	=आत्मा को
	मिल्लिवि	(मिल्ल+इवि) सकृ	=छोड़कर
	गुणणिलउ	[(गुण)-(णिलअ) 2/1 वि]	=गुणों के आश्रय
	अण्णु	(अण्ण) 2/1 वि	=दूसरे
	जि	अव्यय	=ही
	झायहि	(झा→झाय) व 2/1 सक	=चिन्तन करता है
	झाणु	(झाण) 2/1	=विचार का (को)
	वढ	(वढ) 8/1	=हे मूर्ख
	अण्णाण-विमीसियहं	[(अण्णाण)-(विमीसिय) भूकृ 4/2 अनि]	=अज्ञान से जुड़े हुए (व्यक्तियों) के लिए

1 पाहुड दोहा, सम्पादक–डॉ हीरालाल जैन, शब्द कोश, पृष्ठ–79।

	कह	अव्यय	=कैसे
	तह	अव्यय	=वहां
	केवलणाणु	(केवलणाण) 1/1	=केवलज्ञान
38	अप्पा	(अप्प) 2/1	=आत्मा को
	मिल्लिवि	(मिल्ल+इवि) सक्र	= छोडकर
	जगतिलउ	[(जग)-(तिलअ) 2/1 वि]	=जगत की शोभा
	जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
	परदव्वि	[(पर)-(दव्व) 7/1]	=परवस्तु मे
	रमंति	(रम) व 3/2 अक	=टिकते हैं
	अण्णु	(अण्ण) 1/1 वि	=अतिरिक्त
	कि	अव्यय	=क्या
	मिच्छादिट्ठियह	(मिच्छादिट्ठिय) 6/2वि'य' स्वा	=मिथ्यादृष्टि के
	मत्थइ[1]	(मत्थ) 7/1	=माथे पर
	सिंगइ	(सिंग) 1/2	=सींग
	होंति	(हो) व 3/2 अक	=होते हैं
39	अप्पा	(अप्प) 2/1	=आत्मा को
	मिल्लिवि	(मिल्ल+इवि) सक्र	=छोडकर
	जगतिलउ	[(जग)-(तिलअ) 2/1 वि]	=जगत की शोभा
	मूढ	(मूढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
	म	अव्यय	=मत
	झायहि	(झा→झाय) विधि 2/1 सक	=विचार
	अण्णु	(अण्ण) 2/1 वि	=अन्य को
	जिं	(ज) 3/1 स	=जिसके द्वारा
	मरगउ	(मरगअ) 1/1	=मरकत
	परियाणियउ	(परियण→ परियाणिय→ परियाणियअ) भूक्र 1/1 'अ' स्वार्थिक	=जान लिया गया

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ, 146 ।

	तहु	(त) 4/1 स	=उसके लिए
	क	अव्यय	=क्या
	कच्चहु[1]	(कच्च) 6/1	=कांच की
	गण्णु	(गण्ण) 1/1	=गिनती
40	अण्ण	(अण्ण) 2/1 वि	=पर का
	जि	अव्यय	=पादपूरक
	जीउ	(जीअ) 8/1	=हे जीव
	म	अव्यय	=मत
	चिंति	(चिंत) विधि 2/1 सक	=मनन कर
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	जइ	अव्यय	=यदि
	बीहउ[2]	(बीह→बीहिअ) भूकृ 1/1	=डरा हुआ
	दुक्खस्स[3]	(दुक्ख) 6/1	=दु ख से
	तिलतुसमित्तु	(तिलतुसमित्त) 1/1 वि	=तिल-तुस जितना
	वि	अव्यय	=भी
	सल्लडा	(सल्ल+अड) 1/1 'अड' स्वा	=कांटा
	वेयण	(वेयणा) 2/1	=वेदना
	करइ	(कर) व 3/1 सक	=उत्पन्न करता है
	अवस्स	अव्यय	=अवश्य
41	अप्पाए	(अप्प→(स्त्री) अप्पा) 3/1	=व्यक्ति के द्वारा
	वि	अव्यय	=पादपूरक
	विभावियइं	(विभाव→विभाविय) भूकृ 1/2	=समझे हुए हैं
	णासइ	(णास) व 3/1 सक	=नष्ट कर देता है
	पाउ	(पाअ)2/1	=पाप को
	खणेण	क्रिविअ	=क्षण भर मे

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ, 150 ।

2 पाठ होना चाहिए 'बीहिउ' ।

3 कभी-कभी पंचमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134) ।

	सूरु	(सूर) 1/1	=सूर्य
	विरगासइ	(विरगास) व 3/1 सक	=नष्ट कर देता है
	तिमिरहरु	[(तिमिर)-(हर) 2/1]	=अन्धकाररूपी घर को
	एक्कल्लउ	(एक्कल्लअ) 1/1 वि 'अ' स्वा	=अकेला
	णिमिसेण	अव्यय	=तुरन्त
42.	जोइय	(जोइय) 8/1 'य' स्वार्थिक	=हे योगी
	हियडइ	(हिय+अडअ)7/1'अडअ' स्वा	=मन मे
	जासु	(ज) 6/1 स	=जिसके
	पर	(पर) 1/1 वि	=परम
	एक्कु	(एक) 1/1 वि	=एक
	जि	अव्यय	=ही
	णिवसइ	(रिगवस) व 3/1 अक	=निवास करता है
	देउ	(देअ) 1/1	=देव
	जम्ममरण-विवज्जियउ	[(जम्म)-(मरण)(विवज्ज←भूकृ विवज्जिय→विवज्जियअ) भूकृ1/1 'अ' स्वार्थिक]	=जन्म-मरण से रहित
	तो	अव्यय	=तव
	पावइ	(पाव) व 3/1 सक	=प्राप्त करता है
	परलोउ	(परलोअ)2/1	=परलोक
43	कम्मु	(कम्म) 2/1	=कर्म को (कर्मों को)
	पुराइउ	(पुराइअ) 2/1 वि	=पुराने किये हुए
	जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
	खवइ	(खव) व 3/1 सक	=नष्ट करता है
	अहिणव	(अहिरगव) 6/1 वि	=नये का
	पेसु	(पेस) 2/1	=प्रवेश
	ण	अव्यय	=नहीं
	देइ	(दा) व 3/1 सक	=देता
	परमणिरजणु	[(परम)वि-(रिगरजण) 2/1वि]	=परम निर्दोष को
	णवइ	(णव) व 3/1 सक	=नमन करता है

	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	परमप्पउ	(परमप्पअ) 1/1	=परम आत्मा
	होइ	(हो) व 3/1 अक	=हो जाता है
44	पाउ	(पाअ) 1/1	=दोष
	वि	अव्यय	=और
	अप्पहिं	(अप्प) 7/1	=आत्मा मे
	परिणवइ	(परिणव) व 3/1 अक	=उत्पन्न होता है
	कम्मइ	(कम्म) 2/2	=कर्मों को
	ताम	अव्यय	=तभी तक
	करेइ	(कर) व 3/1 सक	=उत्पन्न करता है
	परमणिरंजणु	[(परम) वि-(णिरंजण)2/1 वि]	=उच्चतम और लेप से रहित को
	जाम	अव्यय	=जब तक
	ण	अव्यय	=नहीं
	वि	अव्यय	=पादपूरक
	णिम्मलु	(णिम्मल) 1/1 वि	=निर्मल
	होइ	(हो+इ) सक्ट	=होकर
	मुणेइ	(मुण) व 3/1 सक	=जानता है
45	लोहहिं	(लोह) 3/2	=लोभ के कारण
	मोहिउ	(मोह→मोहिअ) भूकृ 1/1	=मूर्च्छित हुआ
	ताम	अव्यय	=तभी तक
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 म	=तू
	विसयहं	(विसय) 6/2	=विषयो के
	सुक्ख	(सुक्ख) 2/1	=सुख को
	मुणेहि	(मुण) व 2/1 सक	=मानता है
	गुरुहु[1]	(गुरु) 6/2	=गुरु की
	पसाए	(पसाअ) 3/1	=कृपा से

1 आदरसूचक होने से वहुवचन हुआ है।

	जाम	अव्यय	=जब तक
	ण	अव्यय	=नहीं
	वि	अव्यय	=पादपूरक
	अविचल	(अविचल) 2/1 वि	=दृढ़
	बोहि	(बोहि) 2/1	=आध्यात्मिक ज्ञान
	लहेहि	(लह) व 2/1 सक	=प्राप्त करता है
46	उप्पज्जइ	(उप्पज्जइ) व कर्म 3/1 सक अनि	=उत्पन्न किया जाता है
	जेण	(ज) 3/1 स	=जिसके द्वारा
	विबोहु	(विबोह) 1/1	=आत्मबोध
	ण	अव्यय	=नहीं
	वि	अव्यय	=पादपूरक
	बहिरण्णउ	(बहिरण्णअ) 1/1 वि	=बाहरी जानकार
	तेण	(त) 3/1 सवि	=उससे
	णाणेण	(णाण) 3/1	=ज्ञान से
	तइलोयपायडेण	[(तइलोय)-(पायड) 3/1 वि]	=तीन लोक को भी प्रकाशित करनेवाले
	वि	अव्यय	=किन्तु
	असुन्दरो	(असुन्दर) 1/1 वि	=घटिया
	जत्थ	अव्यय	=वहाँ (जहाँ)
	परिणामो	(परिणाम) 1/1	=परिणाम
47.	वक्खाणडा	(वक्खाण+अड) 2/1 'अड' स्वा	=व्याख्यान
	करतु	(कर→करत) वकृ 1/1	=देते हुए
	बुहु	(बुह) 1/1 वि	=ज्ञानी ने
	अप्पि	(अप्प) 7/1	=आत्मा मे
	ण	अव्यय	=नहीं
	दिण्णु[1]	(दिण्ण) भूकृ 1/1 अनि	=दिया

1 यहाँ सकर्मक क्रिया से बना हुआ भूतकालिक कृदन्त (दिण्ण) कर्तृवाच्य मे प्रयुक्त हुआ है जो विचारणीय है।

	णु	अव्यय	=यदि
	चित्तु	(चित्त) 2/1	=चित्त
	करणहिं	(करण) 3/2	=करणो से
	जि	अव्यय	=ही
	रहिउ	(रह→रहिअ) भूकृ 1/1	=रहित
	पयालु	(पयाल) 1/1	=भूसा
	जिम	अव्यय	=जिस प्रकार
	पर	अव्यय	=पूरी तरह से
	सगहिउ	(सगह→सगहिअ) भूकृ 1/1	=इकट्ठा किया गया
	वहुत्तु	(बहुत्त) 1/1 वि	=बहुत
48	पंडियपंडिय	[(पडिय)-(पडिय) 8/1 वि]	=हे विद्वान्, हे बुद्धिमान
	पडिया	(पडिय) 8/1 वि	=हे ज्ञानी
	कणु	(कण) 2/1	=करणो (करण-समूह) को
	छडिवि	(छड+इवि) सकृ	=छोड़कर
	तुस	(तुस) 1/1	=भूसा
	कडिया	(कड→कडिय) भूकृ 1/1	=कूटा गया
	अत्थे	(अत्थ) 7/1	=अर्थ मे
	गथे	(गथ) 7/1	=ग्रन्थ मे
	तुट्ठो	(तुट्ठ) भूकृ 1/1 अनि	=सन्तुष्ट
	सि	(अस) व 2/1 अक	=है
	परमत्थु	(परमत्थ) 2/1	=परमार्थ को
	ण	अव्यय	=नहीं
	जाणहि	(जाण) व 2/1 सक	=जानता है
	मूढो	(मूढ) 1/1 वि	=मूढ
	सि	(अस) व 2/1 अक	=है
49	सयलु	(सयल) 1/1 वि	=सब
	वि	अव्यय	=ही
	कोवि	(क) 1/1 सवि	=कोई
	तडप्फडइ	(तडप्फड) व 3/1 अक	=छटपटाता है (छटपटाते हैं)

	सिद्धत्तणहु	(सिद्धत्तण) 4/1	=सिद्धत्व के लिए
	तणेण	(तण) 3/1	=शरीर से
	सिद्धत्तणु	(सिद्धत्तण) 1/1	=सिद्धत्व
	परि	अव्यय	=किन्तु
	पावियइ	(पाव→पाविय) व कर्म 3/1 सक	=प्राप्त किया जाता है
	चित्तहु[1]	(चित्त) 6/2	=चित्त के
	णिम्मलएण	(णिम्मलअ) 3/1 'अ' स्वार्थिक	=निर्मल होने से
50	अरि	अव्यय	=अरे
	मणकरह	[(मण)-(करह) 8/1]	=मनरूपी ऊँट
	म	अव्यय	=मत
	रइ	(रइ) 2/1	=रमण
	करहि	(कर) विधि 2/1 सक	=कर
	इदियविसयसुहेण	[(इदिय)-(विसय)-(सुह)3/1]	=इन्द्रिय-विषयों से (मिलने-वाले) सुख के कारण
	सुक्खु	(सुक्ख) 1/1	=सुख
	णिरंतरु	(णिरंतर) 1/1 वि	=निरंतर
	जेहिं	(ज) 3/2 स	=जिनके कारण
	ण	अव्यय	=नहीं
	वि	अव्यय	=पादपूरक
	मुच्चहिं	(मुच्चहि)विधि कर्म 2/1 सक अनि	=छोड़ दिए जाने चाहिए
	ते	(त) 1/2 स	=वे
	वि	अव्यय	=ही
	खणेण	क्रिविअ	=तुरन्त
51.	तूसि	(तूस) विधि 2/1 अक	=प्रसन्न रह
	म	अव्यय	=मत
	रूसि	(रूस) विधि 2/1 अक	=नाराज हो

1 यहा बहुवचन का एकवचनार्थ प्रयोग है (श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ, 151)।

कोहु	(कोह) 2/1	=क्रोध
करि	(कर) विधि 2/1 सक	=कर
कोहें	(कोह) 3/1	=क्रोध के कारण
णासइ	(णास) व 3/1 अक	=नष्ट हो जाती है
धम्मु	(धम्म) 1/1	=शान्ति
धम्मि[1]	(धम्म→धम्मे→धम्मि) 3/1	=धर्म
णट्ठि[1]	(णट्ठ→णट्ठें→णट्ठि) भूकृ 3/1 अनि	=नष्ट होने पर
णरयगइ	[(णरय)-(गइ) 1/1]	=नरकगति
अह	अव्यय	=और
गउ	(गअ) भूकृ 1/1 अनि	=व्यर्थ हुआ
माणुसजम्मु	[(माणुस)-(जम्म) 1/1]	=मनुष्य जन्म

52	हत्थ	(हत्थ) 6/1	=हाथ के
	अहुट्ठ	(अहुट्ठ) 1/1 वि	=निकट स्थित
	देवली	[देवल(स्त्री)→देवली 1/1]	=देवालय
	वालहं	(वाल) 6/1	=अज्ञानी का
	णा	अव्यय	=नहीं
	हि	अव्यय	=किन्तु
	पवेसु	(पवेस) 1/1	=प्रवेश
	सतु	(सत) 1/1 वि	=शान्त
	णिरजणु	(णिरजण) 1/1 वि	=शुद्ध
	तहिं	(त) 7/1 स	=उसमे
	वसइ	(वस) व 3/1 अक	=रहती है
	णिम्मलु	(णिम्मल) 1/1 वि	=निर्मल
	होइ	(हो+इ) सकृ	=होकर
	गवेसु	(गवेस) विधि 2/1 सक	=खोज

---

1 ह्रस्वीकरण की प्रवृत्ति के कारण धम्मे→धम्मि, णट्ठें→णट्ठि हुआ है।

अप्पापरहं	[(अप्प (स्त्री)→अप्पा) – (पर)=आत्मा और पर का 6/2 वि]	
ण	अव्यय	=नहीं
मेलयउ	(मेलय–अ) 1/1 'अ' स्वा	=मिलाप
मणु	(मण) 2/1	=मन को
मोडिवि	(मोड+इवि) सक्र	=मोडकर
सहस	अव्यय	=शीघ्र
त्ति	अव्यय	=इस प्रकार
सो	(त) 1/1 सवि	=वह
वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
जोइय	(जोइ–य) 1/1 'य' स्वार्थिक	=योगी
किं	(क) 1/1 सवि	=क्या
करइ	(कर) व 3/1 सक	=करता है (करेगा)
जासु	(ज) 6/1 स	=जिसके
ण	अव्यय	=नहीं
एही	[एत→एह (स्त्री)→एही] 1/1सवि	=यह
सत्ति	(सत्ति) 1/1	=शक्ति

54.

अन्तो	(अन्त) 1/1 वि	=अन्त
णत्थि	अव्यय	=नहीं है
सुईण	(सुइ) 6/2	=शास्त्रों का
कालो	(काल) 1/1	=समय
थोओ	(थोअ) 1/1 वि	=थोडा
वयं	(अम्ह) 1/2 स	=हम
च	अव्यय	=और
दुम्मेहा	(दुम्मेहा) 1/2 वि	=दुर्बुद्धि
त	(त) 1/1 सवि	=वह
णवर	अव्यय	=केवल
सिक्खियव्वं	(सिक्ख) विधिकृ 1/1	=सीखा जाना चाहिए
जिं	(ज) 3/1 स	=जिससे

	जरमरणक्खय	[(जरा[1]→जर)-(मरण)-(क्खय) 2/1]	=जरा-मरण को नष्ट
	कुणहि	(कुण) विधि 2/1 सक	=करे
55	सव्वहिं	(सव्व) 3/2 सवि	=सभी
	रायहिं	(राय) 3/2	=आसक्तियों द्वारा
	छहरसहिं	[(छह) वि-(रस) 3/2]	=छः रसों द्वारा
	पंचहिं	(पंच) 3/2 वि	=पांच
	रूवहिं	(रूव) 3/2	=रूपों द्वारा
	चित्तु	(चित्त) 1/1	=चित्त
	जासु	(ज) 6/1 स	=जिसका
	ण	अव्यय	=नहीं
	रंजिउ	(रंज→रंजिअ) भूकृ 1/1	=रंगा गया है
	भुवणयलि	(भुवणयल) 7/1	=पृथ्वीतल पर
	सो[2]	(त) 2/1 स	=उसको
	जोइय	(जोइ→य) 8/1 'य' स्वार्थिक	=हे योगी
	करि	(कर) विधि 2/1 सक	=बना
	मित्तु	(मित्त) 2/1	=मित्र
56	देह	(देह) 6/2	=देह के
	गलतह[3]	(गल→गलत) वकृ 6/2	=गलती हुई होने पर
	सवु	(सव) 1/1 वि	=सब कुछ
	गलइ	(गल) व 3/1 अक	=क्षीण हो जाता है
	मइ	(मइ) 1/1	=इन्द्रिय ज्ञान
	सुइ	(सुइ) 1/1	=शब्द ज्ञान
	धारण	(धारणा) 1/1	=मन की स्थिरता

1 समास में ह्रस्व का दीर्घ का ह्रस्व हो जाया करता है (हे प्रा व्या 1-4)।

2 अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 174।

3 अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 151 (कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134)।

घेउ	(घेअ) 1/1	=ध्येय
तहिं	अव्यय	=तब
तेहइं	(तेह) 7/1 वि	=उस
वढ	(वढ) 8/1	=हे मूर्ख
अवसरहिं	(अवसर) 7/1	=अवसर पर
विरला	(विरल) 1/2 वि	=बहुत थोड़े
सुमरहिं	(सुमर) व 3/2 सक	=स्मरण कर पाते हैं
देउ	(देअ) 2/1	=देव को (देव कइ)
7 उम्मणि[1]	(उम्मण) 7/1	=आत्मा में
थक्का	(थक्क) भूकृ 1/1 अनि	=ठहरा
जासु	(ज) 6/1 स	=जिसका
मणु	(मण) 1/1	=मन
भग्गा	(भग्ग) भूकृ 1/1 अनि	=दूर हुआ
भूवहिं[2]	(भूव) 7/1	=संसार से
चारु	(चारु) 1/1 वि	=अच्छा
जिम	अव्यय	=जिस प्रकार
भावइ	(भाव) व 3/1 अक	=अच्छा लगता है
तिम	अव्यय	=वैसा
संचरउ	(संचर) विधि 3/1 अक	=व्यवहार करे
ण	अव्यय	=नहीं
वि	अव्यय	=भी
भउ	(भअ) 1/1	=भय
संसारु	(संसार) 1/1	=आसक्ति
58 सुक्खअडा	(सुक्ख+अड) 1/2 'अड' स्वा	=सुख

---

1 उम्मणि=मन के परे (आत्मा में), सं०-डॉ हीरालाल, पाहुडदोहा, दोहा स 104 ।

2 कभी-कभी पंचमी के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है, (हे. प्रा व्या 3-136)।

दुइ[1]	(दुइ) 2/2 वि	=दो
दिवहडइ[2]	(दिवह+अड) 7/1 'अड' स्वा	=दिन तक
पुणु	अव्यय	=फिर
दुक्खह	(दुक्ख) 6/2	=दुखो की
परिवाडि	(परिवाडि) 1/1	=परम्परा
हियडा	(हिय+अड) 8/1'अड'स्वा.	=हे हृदय
हउं	(अम्ह) 1/1 स	=मैं
पइ	(तुम्ह) 2/1 स	=तुझको
सिक्खवमि	(सिक्ख+अव) व प्रे 1/1 सक	=सिखाता हूँ
चित्त	(चित्त) 2/1	=चित्त
करिज्जहि	(कर) विधि 2/1 सक	=लगा
वाडि	(वाड) 7/1	=मार्ग पर

59 जेहा	अव्यय	=जैसे
पाणह	(पाण) 4/2	=प्राणियो के लिए
झु पडा	(झुपडा) 1/1	=झोपड़ा
तेहा	अव्यय	=वैसे ही
पुत्तिए	अव्यय	=अरे
काउ	(काअ) 1/1	=काय
तित्थु	अव्यय	=वहां
जि	अव्यय	=ही
णिवसइ	(णिवस) व 3/1 अक	=रहता है
पाणिवइ	(पणिवइ) 1/1	=प्राणपति
तहि	(त) 7/1 स	=वहां ही
करि	(कर) विधि 2/1 सक	=लगा
जोइय	(जोइय) 8/1 'य' स्वार्थिक	=हे योगी
भाउ	(भाअ) 2/1	=मन

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है, (हे. प्रा व्या 3-137) ।
2 समय-बोधक शब्दो मे सप्तमी होती है ।

मूलु	(मूल) 2/1	=मूल को
छडि	(छड+इ) सकृ	=छोडकर
जो	(ज) 1/1 सवि	=जो
डाल	(डाल) 2/1	=डाल पर
चडि[1]	(चड) व 3/1 सक	=चढ़ता है
कह	अव्यय	=कहाँ
तह	अव्यय	=वहाँ
जोयाभासि	[(जोय)+(आभासि)] [(जोय) 1/1 (आभास) विधि 2/1 सक]	=योग, कह
चीरु	(चीर) 2/1	=वस्त्र
ण	अव्यय	=नहीं
वुणणह	(वुणण) 4/2	=बुनने के लिए
जाइ	(जा) व 3/1 सक	=बुनता है
वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
विणु	अव्यय	=बिना
उट्टिय	(उट्ट→उट्टिय) भूकृ 2/1	=ओटे हुए
इ	अव्यय	=निश्चय ही
कपासि	(कप्पास→कपासी) 2/1	=कपास के
61. सव्ववियप्पह[2]	[(सव्व) वि-(वियप्प) 6/2]	=सब विकल्पों के
तुट्टह[2]	(तुट्ट) भूकृ 6/2 अनि	=टूटा हुआ होने पर
चेयणभावगयाह[2]	[(चेयण)-(भाव)-(गय) भूकृ 6/2 अनि]	=आत्मा के स्वभाव मे पहुँचाहुआ होनेपर
कीलइ	(कील) व 3/1 अक	=क्रीडा करता है
अप्पु	(अप्प) 1/1	=व्यक्ति
परेण	(पर) 3/1 वि	=दूसरे के

---

1 यहाँ वर्तमान काल अन्यपुरुष एकवचन का प्रत्यय 'इ' मूल शब्द मे मिला दिया गया है। नया प्रयोग है।

2 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है। (हे प्रा व्या 3-134)।

	सिहु	अव्यय	=साथ
	णिम्मलझाण-ठियाहु[1]	[(णिम्मल) वि-(झाण)-(ठिय) भूकृ 6/2 अनि]	=निर्मल ध्यान मे ठहरा-हुआ होने पर।
62	अज्जु	अव्यय	=आज
	जिणिज्जइ	(जिण+इज्ज) व कर्म 3/1 सक	=जीता जाता है (जीते जाते हैं)
	करहुलउ	(करह+उल+अ)1/1'उलअ'स्वा	=ऊँट
	लइ	(लअ) सकृ	=ग्रहण करके
	पइ	(तुम्ह) 3/1 स	=तेरे द्वारा
	देविणु	(दा+एविणु) सकृ	=स्वीकार करके
	लक्खु	(लक्ख) 2/1	=लक्ष्य को
	जित्यु	अव्यय	=जहाँ
	चडेविणु	(चड+एविणु) सकृ	=आरूढ होकर
	परममुणि	[(परम)वि-(मुणि) 1/1]	=परम-मुनि
	सव्व	(सव्व) 1/1 वि	=सभी
	गयागय[2]	(गयागय) 6/1	=गमनागमन से
	मोक्खु	(मोक्ख) 2/1	=मुक्ति
63	अप्पा	(अप्प) 8/1	=हे आत्मन्
	मिल्लिवि	(मिल्ल+इवि) सकृ	=छोडकर
	एक्कु	(एक्क) 2/1 वि	=एक
	पर	(पर) 2/1 वि	=पर को
	अण्णु	(अण्ण) 1/1 वि	=अन्य
	ण	अव्यय	=नहीं
	वइरिउ	(वइरिअ) 1/1 वि	=शत्रु
	कोइ	(क) 1/1 सवि	=कोई भी
	जेण	(ज) 3/1 स	=जिसके द्वारा

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है। (हे प्रा व्या 3-134)।

2 कभी-कभी पचमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग किया जाता है (हे प्रा व्या 3-134)।

विणिम्मिय	(वि–णिम्म→वि–णिम्मिय) भूकृ 1/2	=निर्मित हुए
कम्मडा	(कम्म+अड) 1/2 'अड' स्वा	=कर्म
जइ	(जइ) 1/1	=यति
पर	(पर) 2/1 वि	=पर को
फेडइ	(फेड) व 3/1 सक	=दूर हटाता है
सो	(त) 1/1 सवि	=वह
इ	अव्यय	=ही
64 जइ	अव्यय	=यदि
वारउ	(वार) व 1/1 सक	=रोकता हूँ
तो	अव्यय	=तो
तहिं	अव्यय	=वहाँ
जि	अव्यय	=ही
पर	(पर) 2/1 वि	=पर को
अप्पह[1]	(अप्प) 6/2	=आत्मा को
मणु	(मण) 2/1	=मन को
ण	अव्यय	=नहीं
धरेइ	(धर) व 3/1 सक	=धारण करता है
विसयह	(विसय) 6/2	=विषयों के
कारणि	(कारण→(स्त्री) कारणी) 1/1	=कारण
जीवडउ	(जीव+अडअ) 1/1 'अडअ' स्वा.	=जीव
णरयह	(णरय) 6/2	=नरकों के
दुक्ख	(दुक्ख) 2/2	=दु खों को
सहेइ	(सह) व 3/1 सक	=सहन करता है
65 जीव	(जीव) 8/1	=हे जीव
म	अव्यय	=मत

1 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3–134)।

	जाणहि	(जाण) विधि 2/1 सक	=समझ
	अप्पणा	अव्यय	=अपना
	विसया	(विसय) 1/2	=(इन्द्रिय)-विषय
	होसहिं	(हो) भवि 3/2 अक	=होंगे
	मज्झु	(अम्ह) 6/1 स	=मेरे
	फल	(फल) 2/2	=फलों को
	किं	अव्यय	=क्यों
	पाकहि	(पाक) व 2/1 सक	=पकाता है
	जेम तिम	अव्यय	=जैसे-तैसे
	दुक्ख	(दुक्ख) 2/2	=दु खों को
	करेसहिं	(कर) भवि 3/2 सक	=पैदा करेंगे
	तुज्झु	(तुम्ह) 4/1 स	=तेरे लिए
66	विसया	(विसय) 2/2	=(इन्द्रिय)-विषयों का (को)
	सेवहि	(सेव) व 2/1 सक	=सेवन करता है
	जीव	(जीव) 8/1	=हे मनुष्य
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	दुक्खह	(दुक्ख) 6/2	=दु खों का
	साहिक	(साहिका) 1/1 वि	=साधक
	एण[1]	(एअ) 3/1 स	=इससे
	तेण	अव्यय	=इसलिए
	णिरारिउ	अव्यय	=निरन्तर
	पज्जलइ	(पज्जल) व 3/1 अक	=जलती है
	हुववहु	(हुववह) 1/1	=अग्नि
	जेम	अव्यय	=जैसे
	घिएण	(घिअ) 3/1	=घी से
67.	जसु	(ज) 6/1 स	=जिसका

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ, 179।

जीवतहु[1]	(जीव→जीवत) वकृ 6/1	=जीते हुए
मणु	(मण) 1/1	=मन
मुवउ	(मुवअ) भूकृ 1/1 अनि 'अ' स्वा	=मरा हुआ
पचेंदियहु[1]	(पचेदिय) 6/2	=पचेन्द्रिय के
समाणु[2]	अव्यय	=साथ
सो	(त) 1/1 सवि	=वह
जाणिज्जइ	(जाण) व कर्म 3/1 सक	=समझा जाता है
मोक्कलउ	(मोक्कल-अ) 1/1 वि 'अ' स्वा	=मुक्त
लद्धउ	(लद्धअ) भूकृ 1/1 अनि 'अ' स्वा	=प्राप्त किया गया
पहु	(पह) 1/1	=मार्ग
णिव्वाणु	(णिव्वाण) 1/1	=शान्ति

68 किं	(क) 1/1 सवि	=क्या
किज्जइ	(किज्जइ) व कर्म 3/1 सक अनि	=किया जाता है
बहु	(बहु) 6/2 वि	=बहुत
अक्खरहं[1]	(अक्खर) 6/2	=शब्दो से
जें	(ज) 1/2 सवि	=जो
कालि[3]	(काल) 3/1	=समय मे
खउ	(खअ) 2/1	=विस्मरण को
जंति	(जा) व 3/2 सक	=प्राप्त होते हैं
जेम	अव्यय	=जिससे
अणक्खरु	(अणक्खर) 1/1 वि	=अक्षररहित
संतु	(संत) 1/1	=संत
मुणि	(मुणि) 1/1	=मुनि

---

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है। (हे प्रा व्या 3–134)।

2 समाणु के योग मे तृतीया होनी चाहिए।

3 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर तृतीया का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3–137)।

	तव[1]	(तव) 6/1 स अनि	=तेरे लिए
	वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
	मोक्खु	(मोक्ख) 1/1	=मोक्ष
	कहति	(कह) व 3/2 सक	=कहते हैं
69	छहदसणगंथि	[(छह) वि-(दसण)-(गंथ)3/1]	=छहो दर्शनों की गांठ के कारण
	बहुल	(बहुल) 1/2 वि	=बहुत
	अवरुप्परु	क्रिविअ	=एक दूसरे के विरुद्ध
	गज्जति	(गज्ज) व 3/2 अक	=गरजते हैं
	ज	(ज) 1/1 सवि	=जो
	कारणु	(कारण) 1/1	=कारण
	त	(त) 1/1 सवि	=वह
	इक्कु	(इक्क) 1/1 वि	=एक
	पर	अव्यय	=किन्तु
	विवरेरा	(विवरेर) 1/1 वि	=विपरीत
	जाणंति	(जाण) व 3/2 सक	=समझते हैं
70	सिद्धंतपुराणहिं[2]	[(सिद्धत)-(पुराण) 7/2]	=सिद्धान्त और पुराणों को
	वेय	(वेय) 1/2	=वेद
	वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
	बुज्झतह	(बुज्झ→बुज्झत) वकृ 4/2	=समझते हुए(व्यक्तियों)के लिए
	णउ	अव्यय	=नहीं
	भति	(भति) 1/1	=सन्देह
	आणदेण	(आणद) 3/1	=आनन्द से
	व	अव्यय	=और
	जाम	अव्यय	=जब
	गउ	(गअ) भूकृ 1/1 अनि	=मरा

---

1 षष्ठी का प्रयोग चतुर्थी अर्थ में होता है।

2 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है। (हे प्रा व्या 3-135)।

	ता	अव्यय	=तब
	वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
	सिद्ध	(सिद्ध) 2/1 वि	=सिद्ध
	कहंति	(कह) व 3/2 सक	=कहते हैं
71.	भिण्णउ	(भिण्ण-अ) 1/1 वि 'अ' स्वार्थिक	=भिन्न
	जेहिं	(ज) 3/2 स	=जिसके द्वारा
	ण	अव्यय	=नहीं
	जाणियउ	(जाण→जाणिय-अ) भूकृ 1/1 'अ' स्वार्थिक	=जाना गया
	णियदेहहं[1]	[(णिय)-(देह) 6/1]	=निज देह से
	परमत्थु	(परमत्थ) 1/1	=परमार्थ
	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	अंधउ	(अंधअ) 1/1 वि	=अन्धा
	अवरहं	(अवर) 4/2 वि	=दूसरो के लिए
	अंधयहं	(अंधय) 4/2 वि	=अंधो के लिए
	किम	अव्यय	=किस प्रकार
	दरिसावइ	(दरिसाव) व 3/1 सक	=दिखाता है
	पंथु	(पंथ) 2/1	=मार्ग
72	जोइय	(जोइ-य) 8/1 'य' स्वार्थिक	=हे योगी
	भिण्णउ	(भिण्णअ) 2/1 वि 'अ' स्वार्थिक	=भिन्न को
	झाय	(झाय) विधि 2/1 सक	=ध्यान कर
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	देहहं[1]	(देह) 6/1	=देह से
	ते	(तुम्ह) 6/1	=तेरी
	अप्पाणु	(अप्पाण) 2/1	=आत्मा को
	जइ	अव्यय	=यदि
	देहु	(देह) 2/1	=देह को

---

1 कभी-कभी पंचमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134)।

	वि	अव्यय	=ही
	अप्पउ	(अप्पअ) 1/1 'अ' स्वार्थिक	=आत्मा
	मुणहि	(मुण) व 2/1 सक	=मानता है
	ण	अव्यय	=नहीं
	वि	अव्यय	=कभी
	पावहि	(पाव) व 2/1 सक	=पाता है
	णिव्वाणु	(णिव्वाण) 2/1	=निर्वाण
73	रायवयल्लहिं	[(राय)-(वयल्ल) 3/2]	=आसक्ति के कोलाहल द्वारा
	छहरसहिं	[(छह) वि-(रस) 3/2]	=छहों रसों के द्वारा
	पंचहिं	(पंच) 3/2 वि	=पांचों (रूपों) के द्वारा
	रूवहिं	(रूव) 3/2	=रूपों के द्वारा
	चित्तु	(चित्त) 1/1	=चित्त
	जासु	(ज) 6/1 स	=जिसका
	ण	अव्यय	=नहीं
	रंजिउ	(रंज→रंजिअ) भूकृ 1/1	=रंगा गया
	भुवणयलि	(भुवणयल) 7/1	=पृथ्वीतल पर
	सो[1]	(त) 2/1 सवि	=उसको
	जोइय	(जोइ-य) 8/1 'य' स्वार्थिक	=हे योगी
	करि	(कर) विधि 2/1 सक	=(कर) बना
	मित्तु	(मित्त) 2/1	=मित्र
74	तोडिवि	(तोड+इवि) संकृ	=तोडकर
	सयल	(सयल) 2/2 वि	=सब (को)
	वियप्पडा	(वियप्प+अड) 2/2 'अड' स्वा	=विकल्पों को
	अप्पहं[2]	(अप्प) 6/1	=आत्मा में
	मणु	(मण) 2/1	=मन को

---

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ, 174 ।

2 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे. प्रा. व्या. 3-134) ।

वि	अव्यय	=ही
धरेहि	(धर) विधि 2/1 सक	=धारण कर
सोक्खु	(सोक्ख) 2/1	=सुख को
णिरंतरु	(णिरंतर) 2/1 वि	=निरंतर
तहिं	अव्यय	=वहाँ
लहहि	(लह) व 2/1 सक	=पाता है (पायेगा)
लहु	अव्यय	=शीघ्र
संसारु	(संसार) 2/1	=संसार को
तरेहि	(तर) व 2/1 सक	=पार करता है (करेगा)
75 पुण्णेण	(पुण्ण) 3/1	=पुण्य से
होइ	(हो) व 3/1 अक	=होता है
विहओ	(विहअ) 1/1	=वैभव
विहवेण	(विहव) 3/1	=वैभव से
मओ	(मअ) 1/1	=मद
मएण	(मअ) 3/1	=मद से
मइमोहो	[(मइ)-(मोह) 1/1]	=बुद्धि की मूर्च्छा (मतिमोह)
मइमोहेण	[(मइ)-(मोह) 3/1]	=बुद्धि की मूर्च्छा से
य	अव्यय	=और
णरय	(णरय) 1/1	=नरक
तं	(त) 1/1 सवि	=वह
पुण्णु	(पुण्ण) 1/1	=पुण्य
अम्ह	(अम्ह) 4/1 स	=मेरे लिए
मा	अव्यय	=न
होउ	(हो) विधि 3/1 अक	=होवे
76 णमिओ	(णम→णमिअ) भूकृ 1/1	=नमस्कार किए हुए
सि	(अस) व 2/1 अक	=हो
ताम	अव्यय	=तब तक
जिणवर	(जिणवर) 8/1	=हे जिनेन्द्र
जाम	अव्यय	=जब तक

	ण	अव्यय	=नहीं
	मुणिओ	(मुण→मुणिअ) भूकृ 1/1	=समझे गये
	सि	(अस) व 2/1 अक	=हो
	देहमज्झम्मि	[(देह)-(मज्झ) 7/1]	=देह के अन्दर, देह मे
	जइ	अव्यय	=यदि
	मुणिउ	(मुण→मुणिअ) भूकृ 1/1	=समझे गये
	ता	अव्यय	=तो
	केण	(क) 3/1 स	=किसके द्वारा
	णवज्जए	(णवज्जए) व कर्म 3/1 सक अनि	=नमस्कार किया जाए
	कस्स	(क) 4/1 स	=किसको
77	ता	अव्यय	=तब तक
	संकप्पवियप्पा	[(संकप्प)-(वियप्प) 1/2]	=सकल्प-विकल्प
	कम्म	(कम्म) 2/1	=कर्म
	अकुणंतु	(अकुण→अकुणत) वकृ 1/1	=न करते हुए
	सुहासुहजणय	[(सुह)+(असुहा)[1]+(जणय)] [(सुह)-(असुह)-(जणय) 2/1 वि]	=शुभ-अशुभ को उत्पन्न करनेवाला
	अप्पसरूवासिद्धि	[(अप्प)-(सरूवा)[1]-(सिद्धि) 1/1]	=आत्म-स्वरूप की सिद्धि
	जाम	अव्यय	=जब तक
	ण	अव्यय	=नहीं
	हियए	(हियअ) 7/1	=हृदय में
	परिफुरइ	(परिफुर) व 3/1 अक	=स्फुरित होती है
78	अवधउ	(अवधअ) 1/1 'अ' स्वार्थिक	=अहिंसा
	अक्खरु	(अक्खर) 1/1 वि	=दृढ
	ज	अव्यय	=कि
	उप्पज्जइ	(उप्पज्ज) व 3/1 अक	=उत्पन्न होती है
	अणु	(अणु) 1/1 वि	=थोडा
	वि	अव्यय	=भी

1 समास में कभी-कभी ह्रस्व का दीर्घ हो जाता है।

किंपि	(क) 1/1 सवि	=कुछ
अण्णाउ	(अण्णाअ) 1/1 वि	=अन्याय
ण	अव्यय	=नहीं
किज्जइ	(किज्जइ) व कर्म 3/1 सक अनि	=किया जाता है
आयइ	(आय) 2/2	=इन दोनो को
चिंत्ति[1]	(चित्त→चित्तें→चिंत्ति) 3/1	=चित्त मे
लिहि	(लिह) विधि 2/1 सक	=लिख ले
मणु[2]	(मण) 2/1	=मन मे
धारिवि	(धार+इवि) सक्र	=स्थिर करके
सोउ	(सोअ) विधि 2/1 अक	=सो
णिचिंतिउ	(णिचिंतअ) 2/1 वि अ' स्वा	=निश्चिन्त (होकर)
पाय	(पाय) 2/2	=पाँवों को
पसारिवि	(पसार+इवि) सक्र	=पसारकर

79	किं	(क) 1/1 सवि	=क्या
	बहुए	(बहु) 3/1 वि	=बहुत
	अडवड	अव्यय	=अटपट
	वडिण	(वड→वडेण→वडिण) 3/1	=कहने से
	देह	(देह) 1/1	=देह
	ण	अव्यय	=नहीं
	अप्पा	(अप्प) 1/1	=आत्मा
	होइ	(हो) व 3/1 अक	=होती है
	देहह[3]	(देह) 6/1	=देह से
	भिण्णउ	(भिण्णअ) 1/1 वि 'अ' स्वा	=भिन्न
	णाणमउ	(णाणमअ) 1/1 वि	=ज्ञानमय

---

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर तृतीया का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3–137)।

2 कभी–कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3–137)।

3 अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 151।

	सो	(त) 1/1 सवि	=वह
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	अप्पा	(अप्प) 1/1	=आत्मा
	जोइ	(जोइ) 8/1	=हे योगी
80	दयाविहीणउ	[(दया)-(विहीणअ) भूकृ 1/1 अनि 'अ' स्वार्थिक]	=दया से रहित
	धम्मडा	(धम्म+अड) 1/1 'अड' स्वा	=धर्म
	णाणिय	(णाणिय) 8/1 वि 'य' स्वा	=हे ज्ञानी
	कहवि	अव्यय	=किसी तरह भी
	ण	अव्यय	=नहीं
	जोइ	(जोइ) 8/1	=हे योगी
	बहुए	(बहुअ) 3/1 वि	=बहुत
	सलिल-विरोलियइ	[(सलिल)-(विरोल→विरोलिय →विरोलियअ)भूकृ3/1 'अ' स्वा]	=विलोडन किये हुए पानी से
	करु	(कर) 1/1	=हाथ
	चोप्पडा	(चोप्पड) 1/1 वि	=चिकना
	होइ	(हो) व 3/1 अक	=होता है
81	भल्लाण	(भल्ल) 6/2 वि	=भलों के
	वि	अव्यय	=भी
	णासंति	(णास) व 3/2 अक	= नष्ट हो जाते हैं
	गुण	(गुण) 1/2	=गुण
	जहिं	अव्यय	=जहाँ
	सहु	अव्यय	=साथ
	संगु	(संग) 1/1	=संगति
	खलेहिं	(खल) 3/2	=दुष्टों के
	वइसाणरु	(वइसाणर) 1/1	=अग्नि
	लोहहं[1]	(लोह) 6/1	=लोहे के साथ

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134)। अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ, 151।

मिलिउ	(मिल→मिलिअ) भूकृ 1/1	=मिली हुई
पिट्टिज्जइ	(पिट्ट) व कर्म 3/1 सक	=पीटी जाती है
सुघणेंहि	(सुघण) 3/2	=हथौडो से
82 तित्थइ	(तित्थ) 2/2	=तीर्थों पर (को)
तित्थ	(तित्थ) 2/2	=तीर्थों पर (को)
भमेहि	(भम) व 2/1 सक	=जाता है
वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
धोयउ	(धोयअ) भूकृ 1/1 अनि	=धोया हुआ
चम्मु	(चम्म) 1/1	=चमडा
जलेण	(जल) 3/1	=जल से
एहु	(एअ) 2/1 सवि	=इस (को)
मणु	(मण) 2/1	=मन को
किम	अव्यय	=किस प्रकार
धोएसि	(धोअ) व 2/1 सक	=धोयेगा
तुहु	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
मइलउ	(मइल–अ) 2/1 वि	=मैले
पावमलेण	[(पाव)–(मल) 3/1]	=पाप-मल से
83 जोइय	(जोइय) 8/1 'य' स्वार्थिक	=हे योगी
हियडइ	(हिय+अडअ) 7/1 'अडअ' स्वा	=हृदय में
जासु	(ज) 6/1 स	=जिसके
ण	अव्यय	=नहीं
वि	अव्यय	=पादपूरक
इक्कु	(इक्क) 1/1 वि	=एक
णिवसइ	(णिवस) व 3/1 अक	=निवास करती है
देउ	(देअ) 1/1	=दिव्य आत्मा
जम्मणमरण-विवज्जियउ	[(जम्मण)-(मरण)-(विवज्ज→विवज्जियअ) भूकृ 1/1 'अ' स्वार्थिक]	=जन्म-मरण से रहित
किम	अव्यय	=किस प्रकार

	पावइ	(पाव) व 3/1 सक	=प्राप्त करता है (करेगा)
	परलोउ	(परलोअ) 2/1	=श्रेष्ठ जीवन
84	जिम	अव्यय	=जिस प्रकार
	लोणु	(लोण) 1/1	=नमक
	विलिज्जइ	(विलिज्ज) व 3/1 अक	=विलीन हो जाता है
	पाणियह[1]	(पाणिय) 6/1	=पानी मे
	तिम	अव्यय	=उसी प्रकार
	जइ	अव्यय	=यदि
	चित्तु	(चित्त) 1/1	=चित्त
	विलिज्ज	(विलिज्ज) व 3/1 अक	=लीन हो जाता है
	समरसि	[(सम)-(रस) 7/1]	=समतारूपी रस मे
	हूवइ	(हूव) व 3/1 अक	=डूब जाता है
	जीवडा	(जीव+अड) 1/1 'अड' स्वा	=जीव
	काइ	(काइ) 2/1 सवि	=क्या
	समाहि	(समाहि) 1/1	=समाधि
	करिज्ज	(कर→करिज्ज) व 3/1 सक	=करती है
85	तित्थइ	(तित्थ) 2/2	=तीर्थों मे
	तित्थ	(तित्थ) 2/2	=तीर्थों मे
	भमतयह	(भम→भमत) वकृ 6/2 'य' स्वा	=भ्रमण करते हुए (व्यक्तियों) की
	सताविज्जइ	(सताव) व कर्म 3/1 सक	=दुखी की जाती है
	देहु	(देह) 1/1	=देह
	अप्पें	(अप्प) 3/1	=आत्मा के द्वारा
	अप्पा[2]	(अप्प) 1/2	=आत्मा
	झाइयइ	(झाअ) भूकृ 1/2	=ध्याया गया है

1 कर्ता-कर्म सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या. 3-134)

2 आदरसूचक शब्द ।

	णिव्वाण[1]	(णिव्वाण) 2/1	=निर्वाण मे
	पउ	(पअ) 2/1	=पैर, कदम
	देहु	(दा) विधि 2/1 सक	=रख
86	मूढा	(मूढ) 1/1 वि	=मूढ
	जोवइ	(जोव) व 3/1 सक	=देखता है
	देवलइं	(देवल) 1/2	=देवालय
	लोयहिं	(लोय) 3/2	=लोगो के द्वारा
	जाइं	(ज) 1/2 सवि	=जो
	कियाइं	(किय) भूकृ 1/2 अनि	=किये गये (बनाये गये)
	देह	(देह) 2/1	=देह
	ण	अव्यय	=नहीं
	पिच्छइ	(पिच्छ) व 3/1 सक	=देखता है
	अप्पणिय	(अप्पण+इय)2/1 वि 'इय' स्वा	=अपनी
	जहिं	अव्यय	=जहाँ
	सिउ	(सिअ) 1/1	=परम आत्मा
	संतु	(संत) 1/1 वि	=शान्त
	ठियाइं	(ठिय) भूकृ 1/2 अनि	=ठहरा हुआ
87	देहादेवलि	[(देह→देहा)-(देवल) 7/1]	=देहरूपी मन्दिर मे
	सिउ	(सिअ) 1/1	=परम आत्मा
	वसइ	(वस) व 3/1 अक	=बसती है
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	देवलइं	(देवल) 2/2	=मन्दिरो को
	णिएहि	(णिअ) व 2/1 सक	=देखता है
	हासउ	(हास) 1/1 'अ' स्वार्थिक	=हँसी
	महु	(अम्ह) 6/1 स	=मेरे

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है (हे. प्रा व्या 3-137)।

	मरिण	(मरण) 7/1	=मन में
	अत्थि	अव्यय	=है
	इहु	(एअ→एहु→इहु) 1/1 सवि	=यह
	सिद्धें[1]	(सिद्ध) 7/1	=सिद्ध होने पर
	भिक्ख	(भिक्ख) 4/1	=भीख के लिए
	भमेहि	(भम) व 2/1 सक	=घूमता है
88	जिणवरु	(जिणवर) 2/1	=जिनेन्द्र का (को)
	झायहि	(झाय) विधि 2/1 सक	=ध्यान कर
	जीव	(जीव) 8/1	=हे जीव
	तुहु	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	विसयकसायह[2]	[(विसय)-(कसाय) 6/2]	=विषय-कषायो को
	खोइ	(खोअ+इ) सकृ	=नष्ट करके
	दुक्खु	(दुक्ख) 2/1	=दु ख
	ण	अव्यय	=नहीं
	देक्खहि	(देक्ख) विधि 2/1 सक	=देखेगा (देख)
	कहिंमि	अव्यय	=कहीं भी
	वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
	अजरामरु	[(अजर)+(अमर)] [(अजर)-(अमर) 1/1 वि]	=अजर-अमर
	पउ	(पअ) 1/1	=पद
	होइ	(हो) व 3/1 अक	=होता है
89	इन्दियपसर	[(इन्दिय)-(पसर) 1/1]	=इन्द्रियो के प्रसार
	णिवारियइ	(णिवार→णिवारिय) भूकृ 1/2	=रोके गये हैं
	मण	(मण) 8/1	=हे मन
	जाणहि	(जाण) विधि 2/1 सक	=समझ

1 श्रीवास्तव, अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृष्ठ 146 ।

2 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे. प्रा व्या 3-134) ।

	परमत्थु	(परमत्थ) 2/1	=परमार्थ
	अप्पा	(अप्प) 2/1	=आत्मा को
	मिल्लिवि	(मिल्ल+इवि) संकृ	=छोड़कर
	णाणमउ	(णाणमअ) 2/1 वि	=ज्ञानमय
	अवरु	(अवर) 1/1 वि	=दूसरे
	विडाविड	(विडाविड) 1/1 वि	=अटपटे
	सत्थु	(सत्थ) 1/1	=शास्त्र
90	विसया	(विसय) 2/2	=विषयों का (को)
	चिंति	(चिंत) विधि 2/1 सक	=चिंतन कर
	म	अव्यय	=मत
	जीव	(जीव) 8/1	=हे जीव
	तुहुं	(तुम्ह) 1/1 स	=तू
	विसय	(विसय) 1/2	=विषय
	ण	अव्यय	=नहीं
	भल्ला	(भल्ल) 1/1 वि	=अच्छे
	होंति	(हो) व 3/2 अक	=होते हैं
	सेवताह	(सेव→सेवत) वकृ 4/2	=सेवन करते हुए (व्यक्तियों) के लिए
	वि	अव्यय	=किन्तु
	महुर	(महुर) 1/2 वि	=मधुर
	वढ	(वढ) 8/1 वि	=हे मूर्ख
	पच्छइ	अव्यय	=पीछे
	दुक्खइ	(दुक्ख) 2/2	=दु:खों को
	दिंति	(दा) व 3/2 सक	=देते हैं
91	भवि	(भव) 7/1	=जन्म में
	दंसणु	(दंसण) 1/1	=सम्यग्दर्शन
	मलरहिउ	[(मल)-(रहिअ) भूकृ 1/1]	=मलरहित
	करउ	(कर) व 1/1 सक	=(प्रयत्न) करूं
	समाहि	(समाहि) 4/1	=समाधि के लिए

रिसि	(रिसि) 1/1	=ऋषि
गुरु	(गुरु) 1/1	=गुरु
होइ	(होअ) व 3/1 अक	=रहे (होता है)
महु	(अम्ह) 6/1 स	=मेरे
[णिहयमणु- [ब्भववाहि	[णिहय)+(मण)+(उब्भव)+ (वाहि)] [(णिहय) भूकृ अनि- (मण)-(उब्भव)-(वाहि) 1/1]	=मन से उत्पन्न व्याधि नष्ट कर दी गई

92	वेपथेंहि	[(वे) वि-(पथ) 3/2]	=दो मार्गों से
	ण	अव्यय	=नहीं
	गम्मइ	(गम्मइ) व कर्म 3/1 सक अनि	=गमन किया जाता है
	वेमुहसूई[1]	[(वे)वि-(मुह)-(सूई) 6/1]	=दो मुखवाली सूई से
	सिज्जए	(सिज्जए) व कर्म 3/1 सक अनि	=सिया जाता है
	कथा	(कथा) 1/1	=पुराना वस्त्र
	विण्णि	(वि) 1/2 वि	=दोनो
	ण	अव्यय	=नहीं
	हुंति	(हु) व 3/2 अक	=होते हैं
	अयाणा	(अयाण) 8/1 वि	=हे अज्ञानी
	इंदियसोक्ख	[(इंदिय)-(सोक्ख) 1/1]	=इन्द्रिय-सुख
	च	अव्यय	=और
	मोक्ख	(मोक्ख) 1/1	=तनाव-रहितता

---

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134)।

संकेत-सूची

(अ) —अव्यय (इसका अर्थ= लगाकर लिखा गया है)
अक —अकर्मक क्रिया
अनि —अनियमित
आज्ञा —आज्ञा
कर्म —कर्मवाच्य
(क्रिविअ) —क्रिया विशेषण अव्यय (इसका अर्थ=लगाकर लिखा गया है)
तुवि —तुलनात्मक विशेषण
पु० —पुल्लिग
प्रे —प्रेरणार्थक क्रिया
भकृ — भविष्य कृदन्त
भवि – भविष्यत्काल
भाव —भाववाच्च
भू —भूतकाल
भूकृ —भूतकालिक कृदन्त
व —वर्तमानकाल
वकृ —वर्तमान कृदन्त
वि —विशेषण
विधि —विधि
विधिकृ – विधिकृदन्त
स – सर्वनाम
सकृ —सम्वन्धक कृदन्त
सक —सकर्मक क्रिया
सवि —सर्वनाम विशेषण
स्त्री —स्त्रीलिंग
हेकृ —हेत्वर्थक कृदन्त

( ) —इस प्रकार के कोष्ठक मे मूल शव्द रखा गया है।

[( )+( )+( )]
इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर+ चिह्न किन्ही शव्दो मे सधि का द्योतक है। यहाँ अन्दर के कोष्ठको मे दोहे के शव्द ही रख दिए गए हैं।

[( )—( )—( )]
इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर '—' चिह्न समास का द्योतक है।

[[( )—( )-( )] वि]
जहाँ समस्त पद विशेषण का कार्य करता है, वहाँ इस प्रकार के कोष्ठक का प्रयोग किया गया है।

•जहाँ कोष्ठक के वाहर केवल सख्या (जैसे 1/1, 2/1 आदि) ही लिखी है वहाँ उस कोष्ठक के अन्दर का शव्द 'सज्ञा' है।

•जहाँ कर्मवाच्य, कृदन्त आदि अपभ्रश के नियमानुसार नही बने हैं वहाँ कोष्ठक के वाहर 'अनि' भी लिखा गया है।

1/1 अक या सक—उत्तम पुरुप/एकवचन
1/2 अक या सक—उत्तम पुरुप/वहुवचन
2/1 अक या सक—मध्यम पुरुप/एकवचन

2/2 अक या सक - मध्यम पुरुष/बहुवचन
3/1 अक या सक—अन्य पुरुष/एकवचन
3/2 अक या सक—अन्य पुरुष/बहुवचन
1/1 —प्रथमा/एकवचन
1/2—प्रथमा/बहुवचन
2/1 —द्वितीया/एकवचन
2/2—द्वितीया/बहुवचन
3/1 – तृतीया/एकवचन
3/2 तृतीया/बहुवचन
4/1 —चतुर्थी/एकवचन
4/2—चतुर्थी/बहुवचन
5/1—पचमी/एकवचन
5/2—पचमी/बहुवचन
6/1—षष्ठी/एकवचन
6/2— षष्ठी/बहुवचन
7/1—सप्तमी/एकवचन
7/2 - सप्तमी/बहुवचन
8/1—सबोधन/एकवचन
8/2—सबोधन/बहुवचन

पाहुडदोहा एवं चयनिका दोहा-क्रम

चयनिका क्रम	पाहुडदोहा क्रम	चयनिका क्रम	पाहुडदोहा क्रम	चयनिका क्रम	पाहुडदोहा क्रम
1	1	24	37	47	84
2	2	25	40	48	85
3	4	26	44	49	88
4	5	27	46	50	92
5	6	28	48	51	93
6	7	29	51	52	94
7	9	30	54	53	95
8	10	31	56	54	98
9	11	32	57	55	101
10	13	33	59	56	103
11	17	34	60	57	104
12	18	35	61	58	106
13	19	36	63	59	108
14	22	37	67	60	109
15	24	38	70	61	110
16	25	39	71	62	111
17	27	40	74	63	117
18	28	41	75	64	118
19	29	42	76	65	119
20	30	43	77	66	120
21	33	44	78	67	123
22	34	45	81	68	124
23	36	46	82	69	125

पाहुडदोहा सपादक डॉ हीरालाल जैन,
प्रकाशक गोपाल अम्बादास चवरे,
कारजा जैन पब्लिकेशन सोसायटी, कारजा (बरार), वि स 1990

चयनिका क्रम	पाहुडदोहा क्रम	चयनिका क्रम	पाहुडदोहा क्रम	चयनिका क्रम	पाहुडदोहा क्रम
70	126	78	144	86	180
71	128	79	145	87	186
72	129	80	147	88	197
73	132	81	148	89	199
74	133	82	163	90	200
75	138	83	164	91	210
76	141	84	176	92	213
77	142	85	178		

सहायक पुस्तकें एवं कोश

1 पाहुडदोहा	सम्पादक–डा हीरालाल जैन (अबादास चवरे दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला) कारजा (बरार)
2 हेमचन्द्र प्राकृत व्याकरण, भाग 1–2	व्याख्याता–श्री प्यारचन्द जी महाराज (श्री जैन दिवाकर–दिव्य ज्योति कार्यालय मेवाड़ी बाजार, ब्यावर)।
3 प्राकृत भाषाओं का व्याकरण	डॉ आर पिशल (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना)।
4 अभिनव प्राकृत व्याकरण	डॉ नेमिचन्द शास्त्री (तारा पब्लिकेशन, वाराणसी)
5 प्राकृत मार्गोपदेशिका	प बेचरदास जीवराज दोशी (मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली)
6 प्रौढ रचनानुवाद कौमुदी	डॉ कपिलदेव द्विवेदी (विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी)
7 पाइअ–सद्द–महण्णवो	पं हरगोविन्ददास त्रिकमचन्द सेठ (प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी)
8 अपभ्रंश-हिन्दी कोश, भाग 1–2	डॉ नरेशकुमार (इण्डो-विजन प्रा लि II A, 220, नेहरु नगर, गाजियाबाद)
9 हेमचन्द्र-अपभ्रंश-व्याकरण सूत्र विवेचन (जैनविद्या के मुनि नयनन्दी एव कनकामर विशेषाक, सख्या 7, 8)	डॉ कमलचन्द सोगाणी (जैनविद्या सस्थान, दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी, राजस्थान)
10 Apabhramsa of Hemchandra	Dr Kantilal Baldevram Vyas (Prakrit Text Society, Ahmedabad)

11 अपभ्रंश भाषा का अध्ययन — वीरेन्द्र श्रीवास्तव
(एस चाँद एण्ड क प्रा लि , नई दिल्ली)

12 वृहत् हिन्दी कोश — सम्पादक-कालिकाप्रसाद आदि
(ज्ञानमण्डल लिमिटेड, बनारस)

13 संस्कृत हिन्दी कोश — वामन शिवराम आप्टे
(मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली)

14 अपभ्रंश रचना सौरभ — डॉ कमलचन्द सोगाणी
(अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर)